कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय

सेतु पाठ्यक्रम

उच्च प्राथमिक चरण में दाखिला लेनेवाली बालिकाओं के लिए

इतिहास

महिला अध्ययन विभाग

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
श्री अरविन्द मार्ग, नयी दिल्ली 110 016

कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय

सेतु पाठ्यक्रम

उच्च प्राथमिक चरण में दाखिला लेनेवाली बालिकाओं के लिए

इतिहास

महिला अध्ययन विभाग

विद्यया ऽमृतमश्नुते

एन सी ई आर टी
NCERT

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

ISBN 978-93-5007-146-5

प्रथम संस्करण
फ़रवरी 2011 माघ 1932

PD 15T MK

© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 2011

₹ ??.??

80 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा .....????? से मुद्रित।

सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलेक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुनः प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।
- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।
- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन विभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नयी दिल्ली 110 016 फोन : 011-26562708

108, 100 फीट रोड
हेली एक्सटेंशन, होस्डेकेरे
बनाशंकरी III स्टेज
बैंगलूरु 560 085 फोन : 080-26725740

नवजीवन ट्रस्ट भवन
डाकघर नवजीवन
अहमदाबाद 380 014 फोन : 079-27541446

सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस
निकट: धनकल बस स्टॉप पनिहटी
कोलकाता 700 114 फोन : 033-25530454

सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लैक्स
मालीगांव
गुवाहाटी 781021 फोन : 0361-2674869

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन विभाग : *नीरजा शुक्ला*

मुख्य उत्पादन अधिकारी : *शिव कुमार*

मुख्य संपादक : *श्वेता उप्पल*

मुख्य व्यापार प्रबंधक : *गौतम गांगुली*

संपादक : *मीरा कांत*

उत्पादन सहायक : *?*

आवरण, सज्जा और चित्रांकन
ब्लू फ़िश

प्राक्कथन

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 में कहा गया है कि समानता के लिए शिक्षा का एक अनिवार्य कार्य यह है कि सभी सीखनेवालों को अपने अधिकारों का दावा करने के साथ ही समाज और राजव्यवस्था में योगदान देने हेतु सक्षम बनाएँ। हमें यह समझने की आवश्यकता है कि अधिकारों और विकल्पों का उपयोग तब तक नहीं किया जा सकता, जब तक कि मूलभूत मानव क्षमताएँ पूरी तरह से विकसित नहीं होतीं। इसलिए अगर हम चाहते हैं कि विभिन्न सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमिवाले सभी शिक्षार्थी, विशेष रूप से लड़कियाँ, अपना अधिकार प्राप्त करें और सामूहिक जीवन को रूप देने में सक्रिय भूमिका निभाएँ तो उन्हें ऐसी शिक्षा दी जानी चाहिए, जो उन्हें असमान समाजीकरण से हुई हानियों से उबरने की शक्ति दे और उन्हें समानता प्राप्त नागरिक बनने की क्षमताओं का विकास करने के योग्य बनाए।

बालिकाओं को शिक्षा के दायरे में लाना प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण के प्रयासों के मूल में रहा है। सर्वशिक्षा अभियान प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण का एक राष्ट्रीय अग्रणी कार्यक्रम है, जिसमें लड़कियों, विशेष रूप से वंचित समूहों की लड़कियों को स्कूलों में लाने के विशिष्ट प्रयासों और प्राथमिक स्तर पर शिक्षा में लड़के-लड़कियों की संख्या में असमानता को पाटने की आवश्यकता को समझा गया है। इस संबंध में मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय (के.जी.बी.वी.) योजना स्थापित की। यह भारत सरकार की नवाचारी और आशाजनक पहल है, जिसका लक्ष्य उन ग्रामीण और दूरदराज़ की शिक्षा से वंचित और उपेक्षित लड़कियों का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक विकास करना है, जो इस अभाव को झेल रही हैं। सन 2004 में एक योजना के रूप में प्रारंभ होकर सन 2007 में यह सर्वशिक्षा अभियान का एक भाग बन गई। वर्तमान में यह देश के चौबीस राज्यों और एक संघ राज्य क्षेत्र में चल रही है।

यह सेतु पाठ्यक्रम मुफ़्त और अनिवार्य शिक्षा के लिए बच्चों के अधिकार के अधिनियम 2009 में बताए गए कुछ सरोकारों को व्यक्त करने में एक महत्त्वपूर्ण चरण है, विशेष रूप से यह सुनिश्चित करने के संदर्भ में कि निर्बल वर्गों और वंचित समूहों के बच्चों के साथ कोई भेदभाव नहीं होना चाहिए और उन्हें प्रारंभिक शिक्षा को पूरा करने और उसके लिए पाठ्यसामग्री प्रदान करने से नहीं रोका जाना चाहिए।

एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा 11-12 अगस्त 2008 को पिछले कुछ वर्षों में के.जी.बी.वी. योजनाजनित अनुभवों को बाँटने के लिए एक राष्ट्रीय परामर्श कार्यक्रम आयोजित किया गया। इस परामर्श में विभिन्न क्षेत्रों के विद्वान एक स्थान पर मिले। इस परामर्श कार्यक्रम में के.जी.बी.वी. में प्रवेश पाने वाली लड़कियों के लिए सेतु पाठ्यक्रम और के.जी.बी.वी. शिक्षकों के लिए कौशल को उन्नत बनाने हेतु एक समूह-विशिष्ट शिक्षक प्रशिक्षण पैकेज विकसित करने की पूरी अनुशंसा की गई। इस पृष्ठभूमि में महिला अध्ययन विभाग ने एन.आई.ई. के पाठ्यचर्या संबंधी विभागों, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थानों और अन्य संस्थानों के विशेषज्ञों के सहयोग से अंग्रेज़ी, हिंदी, भूगोल, समाज विज्ञान, राजनीति विज्ञान, कला और सौंदर्यशास्त्र, विज्ञान एवं गणित में सेतु पाठ्यक्रम और शिक्षक प्रशिक्षण पैकेज विकसित

करने की पहल की। यह सामग्री एन.सी.एफ.–2005 को ध्यान में रखकर विकसित की गई है और यह एन.सी.ई.आर.टी. की प्राथमिक और उच्च प्राथमिक स्तर की पाठ्यपुस्तकों पर आधारित है।

यह सेतु पाठ्यक्रम एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा उन बालिकाओं की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने की एक अग्रणी पहल है जो पढ़ाई छोड़ देने के दो अथवा अधिक वर्षों के अंतराल के बाद विद्यालय में पुनः प्रवेश लेती हैं। यह पाठ्यक्रम विद्यार्थियों के संदर्भों को ध्यान में रखते हुए तैयार किया गया है। विज्ञान, गणित, इतिहास, भूगोल और हिंदी तथा अंग्रेज़ी भाषाओं के सेतु पाठ्यक्रम में दिए गए शैक्षिक उपागमों में सरल भाषा के उपयोग के साथ भागीदारी वाले कार्यकलापों का उपयोग किया गया है, जिन्हें विभिन्न कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों की आवश्यकताओं के अनुसार अनुकूलित किया जा सकता है। सेतु पाठ्यक्रम को एक पाठ्यक्रम के रूप में नहीं मानना चाहिए। इसका उपयोग कार्यकलापों को संदर्भ के अनुसार अनुकूलित करने, कार्यपत्रिका बनाने, परियोजना कार्य आदि में किया जा सकता है, जो उनके शैक्षिक उपागमों को समृद्ध करेगा। इस सामग्री को के.जी.बी.वी. की बालिकाओं की आवश्यकताओं के अनुसार अपनाया और अनुकूलित किया जा सकता है। साथ ही यह सामग्री एक विकासशील उपागम और एक सृजनशील प्रक्रिया के रूप में काम करेगी।

प्रोफ़ेसर कृष्ण कुमार, पूर्व निदेशक, एन.सी.ई.आर.टी. के निर्देशन और मार्गदर्शन के बिना महिला अध्ययन विभाग (डी.डब्लू.एस.) इस प्रयास को आगे नहीं बढ़ा सकता था। उन्होंने ही के.जी.बी.वी. योजना की बालिकाओं की शैक्षिक चुनौतियों को संबोधित करने में वर्तमान सेतु पाठ्यक्रम के महत्त्व की परिकल्पना की थी।

हम समीक्षा समिति की अध्यक्ष डॉ. शारदा जैन, निदेशक, संधान, जयपुर और अन्य सदस्यों सिस्टर सबीना, पूर्व राज्य परियोजना निदेशक, महिला समाख्या सोसाइटी, पटना, बिहार; सुश्री सीमा भास्करन, राज्य परियोजना निदेशक, महिला समाख्या सोसाइटी, केरल और सुश्री अमुक्ता महापात्र, निदेशक, स्कूल स्केप, चेन्नई द्वारा की गई सुविज्ञ समीक्षा और दिए गए सुझावों के लिए उनके प्रति आभार प्रकट करते हैं। हम मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा गठित मूल्यांकन समूह के सदस्यों– सुश्री सरिता मित्तल, निदेशक, ई.ई.8; सुश्री किरण डोगरा, परामर्शदाता, जेंडर, एड.सी.आई.एल. और सुश्री दीप्ता भोग, निदेशक, निरंतर, दिल्ली के प्रति उनके संशोधनों और सुझावों हेतु आभारी हैं।

एन.सी.ई.आर.टी. अपने उत्पादों की गुणवत्ता में क्रमबद्ध सुधार करने और उसे निरंतर उन्नत बनाने के लिए संकल्पबद्ध है। हम इस विषय में उन सभी टिप्पणियों और सुझावों का स्वागत करेंगे, जिनसे हमें संशोधन और परिष्करण में सहायता मिले।

नयी दिल्ली
11 जून 2010

निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और
प्रशिक्षण परिषद्

आमुख

कस्तूरबा गांधी बालिका आवासीय विद्यालयों (के.जी.बी.वी.) की लड़कियों के लिए सेतु पाठ्यक्रम का विकास एन.सी.ई.आर.टी. की राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2005 के मार्गदर्शी सिद्धांतों को ध्यान में रखकर किया गया है, जो किताबी ज्ञान की उस विरासत से अलग है, जो आज भी हमारी व्यवस्था को आकार दे रहा है तथा स्कूल, घर और समुदाय के बीच अंतराल बनाए हुए है। विभिन्न विषय–क्षेत्रों जैसे–अंग्रेज़ी, हिंदी, इतिहास, भूगोल, विज्ञान और गणित में यह सामग्री एन.सी.ई.आर.टी. की प्राथमिक और उच्च प्राथमिक स्तर की पाठ्यपुस्तकों पर आधारित है। सेतु पाठ्यक्रम के ये सभी विषय–क्षेत्र के.जी.बी.वी. की लड़कियों के अधिगम–कौशलों को बढ़ाने में सहायता करेंगे और उन्हें उच्च प्राथमिक स्तर में प्रवेश के लिए तैयार करेंगे। यह सेतु पाठ्यक्रम के.जी.बी.वी. बालिकाओं को प्राथमिक से उच्च प्राथमिक स्तर तक उनके शैक्षिक विकास हेतु पर्याप्त मार्ग उपलब्ध कराएगा। इसके अंतर्गत कक्षा में अन्वेषण और रचनात्मकता हेतु अवसर दिए गए हैं। अंग्रेज़ी और इतिहास में उपयोग की गई द्विभाषी तकनीक लड़कियों को उनके अधिगम और सोचने के कौशलों में काफ़ी आगे ले जाएगी। अधिगम में लचीलापन और विषयों से संबंधित कार्यपत्रक, शिक्षक द्वारा प्रदर्शन, किस्से, कविता पाठ, वर्ग–पहेली, प्रयोग, हस्त कौशल, मौखिक परंपराएँ और विभिन्न विषयों की पाठ्य सामग्री इस पाठ्यक्रम की विशिष्टताएँ हैं।

प्रत्येक विषय–क्षेत्र हेतु एन.सी.एफ.–2005 पर आधारित प्राथमिक और उच्च प्राथमिक पाठ्यपुस्तकों से प्रमुख संकल्पनाओं का चयन किया गया है। प्रत्येक संकल्पना को एक अलग प्रकार के क्रियाकलाप द्वारा प्रस्तुत किया गया है, जिसमें किसी प्रकार की परिभाषा या रटकर सीखनेवाली सामग्री का समावेश नहीं है। विद्यार्थियों के लिए संकल्पना या धारणा क्रियाकलापों के माध्यम से प्रस्तुत की गई हैं, जिससे वे उन्हें समझ सकें और उनका विश्लेषण कर सकें। आशा की जाती है कि प्राथमिक और उच्च प्राथमिक स्तरों के मध्य सेतु के रूप में काम में ली जाने वाली यह सामग्री विद्यालय छोड़ चुकी बालिकाओं की पढ़ाई संबंधी ज़रूरतों के अपने उद्देश्यों को पूरा करेगी। दिए गए क्रियाकलाप उदाहरण स्वरूप हैं। स्थानीय विशिष्ट संदर्भों पर आधारित वैकल्पिक क्रियाकलाप कराए जा सकते हैं। प्रत्येक क्रियाकलाप में अन्य समरूप स्थानीय विशिष्टता वाले क्रियाकलाप रचने के अवसर हैं और यह आवश्यक नहीं है कि पाठ्यपुस्तक में दी गई सामग्री ही उसमें काम में ली जाए। इसका कार्यक्षेत्र और विस्तृत हो पाएगा, यदि इसमें इस प्रकार के और क्रियाकलापों को स्थान मिल सके।

विभिन्न विषयों में विकसित किया गया सेतु पाठ्यक्रम जेंडर समावेशी है। यह जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं के योगदान को बताता है। यह सुझावात्मक सामग्री के.जी.बी.वी. बालिकाओं की विविधता और भिन्न संदर्भों को ध्यान में रखते हुए एक विनम्र प्रयास है। सेतु पाठ्यक्रम में दिए गए शैक्षिक अधिगम विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक संदर्भों में स्थित कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों की बहुआयामी और विविध ज़रूरतों को संबोधित करने का प्रयास करते हैं। इस सेतु पाठ्यक्रम का प्रयोग और परीक्षण 22 फ़रवरी से 3 मार्च 2010 तक एन.आई.ई., एन.सी.ई.आर.टी. में नौ राज्यों जैसे–आंध्र प्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़, झारखंड, मध्य प्रदेश, ओड़ीशा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल से आए चौबीस मास्टर प्रशिक्षकों पर किया गया।

मास्टर प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण की अवधि में दिए गए सुझावों को समावेशित कर लिया गया है। यदि आपके कुछ और सुझाव हों, तो उनका स्वागत है।

आओ मिल-जुल कर
रचें एक सुंदर संसार

विकास समिति सदस्य

इन्दु कुमार, *असिस्टेंट प्रोफ़ेसर*, केंद्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिक संस्थान, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली।

मिली राय आनन्द, *असिस्टेंट प्रोफ़ेसर*, सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली।

रीतु सिंह, *असिस्टेंट प्रोफ़ेसर*, सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली।

एम. सिराज अनवर, *एसोसिएट प्रोफ़ेसर*, योजना, कार्यक्रम, परिवीक्षण एवं मूल्यांकन प्रभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली।

सदस्य समन्वयक

गौरी श्रीवास्तव, *प्रोफ़ेसर* एवं *अध्यक्ष*, महिला अध्ययन विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली।

आभार

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) इस सेतु पाठ्यक्रम को बनाने में सम्मिलित व्यक्तियों और संगठनों के बहुमूल्य योगदान के लिए उनके प्रति आभार व्यक्त करती है।

इस सेतु पाठ्यक्रम का निर्माण प्रोफ़ेसर कृष्ण कुमार, *पूर्व निदेशक*, एन.सी.ई.आर.टी. के निर्देशन और मार्गदर्शन से पूर्ण हुआ। प्रोफ़ेसर जी. रवीन्द्र, *निदेशक (प्रभारी)*, एन.सी.ई.आर.टी. ने इसकी रचना में हर तरह से सहयोग दिया। प्रोफ़ेसर नीरजा शुक्ला, *पूर्व अध्यक्ष*, महिला अध्ययन विभाग का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा।

प्रोफ़ेसर सविता सिन्हा, *विभागाध्यक्ष*, सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग (डी.ई.एस.एस.एच) को हम उनके द्वारा दिए गए सतत सहयोग और सहायता के लिए विशेष रूप से धन्यवाद देते हैं। विभिन्न विद्यालयों के अध्यापकों चंद्र प्रभा भाटिया, *टी.जी.टी.* (सामाजिक विज्ञान), केंद्रीय विद्यालय, बालीगंज, कोलकाता; नागेंद्रप्पा, *पी.जी.टी.* (इतिहास), डी.एम.एस., आर. आई.ई., मैसूर; नंदिता सिंह, *भूतपूर्व पी.जी.टी.* (इतिहास), *प्रोजेक्ट एसोसिएट*, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली और स्मिता सहाय भट्टाचार्य, *पी.जी.टी.* (इतिहास), ब्लू बेल्स स्कूल, कैलाश कॉलोनी, नयी दिल्ली के प्रति इस पुस्तक की समीक्षा करने के लिए हम कृतज्ञता प्रकट करते हैं। श्री प्रमोद तिवारी, *परामर्शदाता*, साहित्य अकादमी; डॉ. कुमकुम चतुर्वेदी एवं श्री डी.डी.नौटियाल, *पूर्व सचिव*, वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग का भी प्रत्येक अध्याय में हिंदी वॉकन सामग्री के पुनरीक्षण के लिए और सुश्री इन्दू कुमार का प्रत्येक अध्याय में दी गई कविता की रचना के लिए हम हार्दिक आभार ज्ञापित करते हैं। इस पुस्तक के निर्माण मे महिला अध्ययन विभाग के प्रशासनिक सहयोगियों द्वारा किए गए प्रयासों और उनके योगदान के लिए उनके भी हम आभारी हैं।

इस सेतु पाठ्यक्रम के चित्र बनाने और सज्जा के लिए श्रीमती सीमा ज़बिन हुसैन तथा *डी.टी.पी. ऑपरेटर* श्री सुरेन्द्र कुमार, कमलेश राव व मीनाक्षी तोमर के महत्त्वपूर्ण योगदान के लिए हम उनके आभारी हैं।

इस पुस्तक के प्रकाशन में प्रकाशन विभाग द्वारा प्रदान किए गए सहयोग के लिए महिला अध्ययन विभाग उनके प्रति आभार व्यक्त करता है।

विषय-सूची

	प्राक्कथन	*iii*
	आमुख	*v*
1.	परिचय	1-2
2.	एक समय था जब मनुष्य शिकारी था और भोजन संग्रह करता था	3-9
3.	आरंभिक खोजें और आविष्कार	10-19
4.	प्राचीनतम नगरों की गाथा हड़प्पा की सभ्यता	20-25
5.	भारत के बाहर से आनेवाले लोग और उनका प्रभाव	26-33
6.	भारत के प्रमुख पुरुषों और महिलाओं के योगदान	34-46

गांधी जी का जंतर

तुम्हें एक जंतर देता हूँ। जब भी तुम्हें संदेह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आज़माओ–

जो सबसे गरीब और कमज़ोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शक्ल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुँचेगा? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा? यानी क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा, जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा संदेह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।

M.K. Gandhi

1

परिचय

इतिहास में यह सेतु पाठ्यक्रम (ब्रिज कोर्स) बालिकाओं को भारत के विविधतापूर्ण इतिहास की संक्षिप्त जानकारी देने के लिए बनाया गया है। इससे हमें यह जानकारी मिलती है कि मनुष्य किस प्रकार अपने प्राकृतिक और सामाजिक परिवेश को समझने का प्रयास करता रहता था और किस प्रकार वह अपने जीवन को सरल से अधिक जटिल बनाता चला गया, अर्थात खाना, कपड़ा और आवास की ज़रूरतों को पूरा करने के क्रम में उसने किस प्रकार से मनोरंजन, रोज़गार आदि की ज़रूरतों को पूरा करना शुरू कर दिया।

स्वयं को जीवित रखने के लिए मनुष्य प्रकृति के रहस्यों को समझने का सतत प्रयास करता रहा है। मानव ने सुरक्षा, उत्पादन, परिरक्षण और संरक्षण करना सीखा। इससे उसका जीवन अधिक व्यवस्थित और स्थिर हो गया।

सेतु पाठ्यक्रम के विषयों का चयन इस प्रकार किया गया है, जिससे कि बालिकाओं को यह समझने में सहायता मिले कि मानव ने पृथ्वी पर जीवन किस प्रकार शुरू किया था। इस पाठ्यपुस्तक में ऐसी कुछ खोजों और आविष्कारों का उल्लेख किया गया है, जिनसे मानव जीवन में क्रांतिकारी बदलाव आना शुरू हुआ। साथ ही इसमें प्राचीन शहरों के क्रमिक विकास का उल्लेख किया गया है। पुस्तक में यह भी बताया गया है कि प्राचीन काल में समय-समय पर भारत की सुगम सीमाओं को पार करके किस प्रकार अन्य देशों से लोग यहाँ आकर बसते रहे। देशी और विदेशी जनसमुदाय के बीच जो परस्पर क्रिया होती रही उसका प्रभाव आज भी स्पष्ट दिखता है। ऐसी परस्पर क्रियाओं का प्रभाव वस्त्रों, भोजन, संगीत, कला और वास्तुकला पर आज भी दिखाई देता है। पुस्तक के अंतिम अध्याय में कुछ ऐसे प्रमुख पुरुषों और महिलाओं के योगदानों के बारे में बताया गया है, जिन्होंने सामाजिक असमानता और राष्ट्रीय अभिमान के मुद्दों को अपना लक्ष्य बनाया था।

सेतु पाठ्यक्रम को पढ़ने के बाद आप यह समझ पाएँगे कि हमारा इतिहास विविधतापूर्ण रहा है और हमारी सांस्कृतिक विरासत ऐसे पुरुषों और महिलाओं के योगदान पर आधारित है, जो समाज के विभिन्न वर्गों के थे।

इतिहास के सेतु पाठ्यक्रम को इसी विषय की एक अन्य पुस्तक के रूप में नहीं मानना चाहिए। यह भारत के विविधतापूर्ण इतिहास को

क्यों पढ़ें हम इतिहास?

इतिहास एक रोमांचक यात्रा है। यह यात्रा तुम्हें समय और संसार के आरपार ले जाती है। आज हम जिस दुनिया में हैं उसे बनाया है हमसे पहले आए लोगों ने। उनके जीवन के सुख-दुख, अपने युग की समस्याओं से जूझने की उनकी कोशिशें, उनकी खोजें और आविष्कार—इन्हीं के ताने-बाने में तो मानव समाज बदला। हम लंबे अंतराल में धीमे-धीमे होने वाले परिवर्तनों का असर इतिहास के झरोखे से देख पाते हैं। इतिहास पढ़कर हम समझ पाते हैं कि आधुनिक दुनिया अनेक सदियों से हो रहे बदलावों का परिणाम है।

दिलचस्प बनाने और अन्योन्य क्रियात्मक (स्वयं करके देखो) विधि के ज़रिए समझने का एक अच्छा प्रयास है। सुझाए गए विभिन्न क्रियाकलापों से बालिकाओं को इतिहास और वर्तमान के बीच की कड़ी को जोड़ने के लिए प्रोत्साहन मिलेगा, जिससे इतिहास उनके सामने जीवंत हो जाएगा। विभिन्न अध्यायों में बताए गए क्रियाकलापों में विभिन्न क्षेत्रों में स्थित के.जी.बी.वी. विद्यालयों के स्थानगत संदर्भ के अनुसार परिवर्तन किए जा सकते हैं। बॉक्सों में दी गई सामग्री और कविताओं का स्थानीय भाषाओं में अनुवाद किया जा सकता है अथवा उनमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन किए जा सकते हैं।

इतिहास वो नहीं कहानी
जिसमें केवल राजा-रानी
उनका जीवन, उनका राज
उनकी सेना, उनके काज।

जीत किसी की, किसी की हार
रथ, घोड़े, हाथी, तलवार
मंत्रियों और मुलाज़िमों से
सजा हुआ राजदरबार।

महलों का और युद्धों का ही
नहीं है ब्यौरा इसमें आज
आम लोगों की भी इसमें
गूँज रही है अब आवाज़।

आम लोग तब क्या करते थे
कैसे करते गुज़र-बसर
युद्धों और हार-जीतों का
उन पर पड़ता था क्या असर!

महिलाएँ तब क्या करती थीं
और बच्चे क्या करते थे
इतिहास के सब कालों में
वो सब भी तो बसते थे।

सबका जीवन, सबकी शैली
लोक-कला और तीज-त्योहार
इतिहास में आज सभी है
नहीं खास कोई, ना है आम।

—इन्दू कुमार

2

एक समय था जब मनुष्य शिकारी था और भोजन संग्रह करता था

एक समय था जब मनुष्य जंगल में रहते थे, भोजन की तलाश में उन्हें दूर-दूर तक भटकना पड़ता था, क्योंकि वे फल-फूल और अन्न उपजाना नहीं जानते थे। उन्हें आग जलाना भी नहीं आता था और न ही आज जैसे यातायात के साधन उनके पास थे। वे मीलों पैदल चलकर जानवरों का शिकार करते और खाने योग्य कंद-मूल, फल और अन्न का संग्रह करते। रात को वे जंगल में प्राकृतिक तरीके से बनी गुफ़ाओं में सो जाते। खतरनाक जंगली जानवरों का भय उन्हें सदा सताता रहता था, अत: वे समूह में रहते थे। एक जगह के कंद-मूल, फल और अन्न जब खत्म हो जाते, तो वे दूसरी ऐसी जगह की तलाश में निकल पड़ते, जहाँ इनकी अधिकता हो।

आपके पास पढ़ने के लिए पुस्तकें हैं, विद्यालय हैं, जहाँ आप सीख सकते हैं और ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। भोजन पकाने के लिए आग है, भोजन संग्रह करने के लिए बर्तन हैं, पहनने के लिए वस्त्र हैं, दूरी तय करने के लिए साइकिलें या बसें हैं, खेतों की जुताई के लिए हल हैं और चीज़ें खरीदने के लिए पैसा है, आदि-आदि। एक पल के लिए कल्पना कीजिए कि आपके पास ये सब नहीं हैं और आपको प्रकृति से भोजन प्राप्त करना पड़े तथा बिना पका भोजन खाना पड़े, घने जंगलों और मैदानों में लंबी यात्रा करनी पड़े, अपना घर स्वयं बनाना पड़े आदि। जी हाँ, हज़ारों वर्ष पहले ऐसा ही समय था, जब पुरुष, महिलाएँ और बच्चे इसी तरह जीते थे। वे खानाबदोशों की तरह एक से दूसरे स्थान पर पेड़-पौधों, फलों और जानवरों की तलाश में घूमते फिरते थे। उनका जीवन शिकार करने और भोजन संग्रह करने पर निर्भर था।

वे कौन थे?

इस उपमहाद्वीप में रहने वाले सबसे पहले लोग शिकारी और भोजन संग्रह करने वाले थे। वे उस ढंग से नहीं रहते थे, जैसे आज हम रहते हैं। वे खानाबदोश जीवन जीते थे, अर्थात वे मुख्य रूप से भोजन और आश्रय की तलाश में यहाँ-वहाँ घूमते रहते थे। उन्हें उनकी जीने की शैली के कारण शिकारी और भोजन संग्रहकर्ता कहा जाता था। हमारे पास आज जो ज्ञान और कौशल है, उसकी जड़ें उनके समय की हैं।

हम उनके विषय में कैसे जानते हैं?

शिकारियों और भोजन संग्रहकर्ताओं द्वारा उपयोग किए जाने वाले उपकरणों और औज़ारों के अवशेष अनेक स्थानों पर पाए गए हैं। इनमें से कुछ औज़ारों को पुरातत्वविज्ञानियों ने पृथ्वी की सतह पर पाया है, कुछ को पृथ्वी के भीतर और कुछ समुद्र के भीतर भी दबे पाए गए।

पुरातत्व विज्ञान क्या है?

पुरातत्व विज्ञान का अर्थ है भौतिक अवशेषों को ढूँढ़कर निकालना और उनका अध्ययन करना, विशेषरूप से कब्रों, इमारतों आदि की खुदाई करने पर मिले औज़ारों, मिट्टी के बर्तनों आदि का अध्ययन, जिनसे पूर्वकाल के मानव जीवन और संस्कृति को समझने में सहायता मिलती है।

पुरातत्वविज्ञानी कौन होता है?

पुरातत्वविज्ञानी वह व्यक्ति होता है, जो खुदाई के स्थलों या पुरातन स्थलों और वहाँ से प्राप्त भौतिक अवशेषों के माध्यम से मानव जीवन और संस्कृति का अध्ययन करता है।

पुरातन स्थल

ये वे स्थान होते हैं, जहाँ शिकारियों और भोजन संग्रहकर्ताओं द्वारा उपयोग की गई वस्तुओं, जैसे औज़ारों, बर्तनों और इमारतों के अवशेष पाए जाते हैं।

पुरातात्विक प्रमाणों के आधार पर हम शिकारियों और भोजन संग्रहकर्ताओं की जीवन शैली के तरीकों के विषय में जानते हैं।

शिकारी और भोजन संग्रहकर्ता जिन गुफ़ाओं में रहते थे, उनमें से अनेक की दीवारों पर भित्ति चित्र पाए जाते हैं। गुफ़ाओं में भित्ति चित्रों के कुछ श्रेष्ठ उदाहरण मध्य प्रदेश में भीमबेटका और दक्षिणी उत्तर प्रदेश के हैं। विश्व के अन्य भागों में भी गुफ़ाओं में भित्ति चित्र पाए गए हैं। नीचे फ्रांस की एक गुफ़ा का चित्र है।

यह चित्र फ्रांस की एक गुफ़ा का है। इस स्थल की खोज सौ से अधिक वर्ष पूर्व विद्यालय के चार छात्रों द्वारा की गई थी। इस प्रकार के चित्र लगभग 10,000 वर्ष पूर्व बनाए गए थे। यह संभव है कि ये चित्र समारोहों के अवसरों पर बनाए जाते थे अथवा उन्हें उन विशेष अनुष्ठानों के लिए बनाया जाता था, जिन्हें शिकारी शिकार पर जाने से पूर्व संपन्न करते थे।

स्रोत – *हमारे अतीत–1*, एन.सी.ई.आर.टी., पृ. 19

भीमबेटका में चट्टानों पर पाषाण युग के चित्र आश्रय स्थलों पर पाए गए। भीमबेटका आश्रय स्थल मध्य प्रदेश के रायसेन जिले में स्थित है तथा ये भारत में प्रारंभिक मानव जीवन के अवशेषों को प्रदर्शित करते है।

ये लोग कब, कहाँ और कैसे रहते थे?

शिकारी और भोजन संग्रहकर्ता भारतीय उपमहाद्वीप में 20 लाख वर्ष पूर्व रहते थे। ये अनेक स्थानों पर रहते थे। इनमें से कुछ स्थान भारत के मानचित्र पर दिखाए गए हैं। लाल त्रिकोणों से चिह्नित सभी स्थान वे स्थल हैं, जहाँ से पुरातत्वविज्ञानियों ने शिकारी संग्रहकर्ताओं के रहने के प्रमाण प्राप्त किए हैं। मध्य प्रदेश में भीमबेटका ऐसे ही एक स्थल का उदाहरण है। लोग रहने के लिए इन गुफ़ाओं को इसलिए चुनते थे क्योंकि ये गुफ़ाएँ वर्षा, गर्मी और हवा से उनका बचाव करती थीं।

स्रोत – *हमारे अतीत–1*, एन.सी.ई.आर.टी., पृ. 14

अनेक स्थल जल के स्रोतों जैसे नदियों और झीलों के निकट थे। लोग भोजन की तलाश में एक से दूसरे स्थान पर जाते थे। ये जंगली जानवरों का शिकार करते थे, मछलियों और पक्षियों को पकड़ते थे। फलों, कंद–मूलों, गिरियों, बीजों, पत्तियों, डंठलों, अंडों आदि का संग्रह करते थे।

महिलाएँ व पुरुष–कौन क्या करता था?

हमें महिलाओं और पुरुषों द्वारा किए जाने वाले विशिष्ट क्रियाकलापों की वास्तविक जानकारी नहीं है। यह संभव है कि पुरुष और महिलाएँ अनेक कार्य मिलकर करते हों। यह भी संभव है कि कुछ कार्य सिर्फ़ पुरुषों द्वारा और अन्य सिर्फ़ महिलाओं द्वारा किए जाते हों। क्या आप ऐसे कार्यों की पहचान कर सकते हैं?

स्रोत – *हमारे अतीत–1*, एन.सी.ई.आर.टी., पृ. 13

उनका जीवन आसान नहीं था। फलों को एकत्रित करने के लिए उन्हें विशेषत: उन मौसमों की जानकारी की आवश्यकता होती थी, जब फल पकते थे। जानवरों का शिकार करने या मछलियों अथवा पक्षियों को पकड़ने के लिए लोगों को सतर्कता, तत्परता और समय पर सूझबूझ की आवश्यकता होती थी। जानवरों के शिकार के लिए उनकी खानपान की आदतों और उनके प्रजनन की ऋतुओं की जानकारी की आवश्यकता होती थी। इससे प्राचीन मानव को पशुचारण अर्थात पशुपालन के बारे में जानकारी प्राप्त होने में सहायता मिली होगी।

उनके उपयोग के औज़ार

संभव है कि लोग पत्थर, लकड़ी और हड्डी से औज़ारों को बनाते रहे हों और उनका उपयोग करते रहे हों। इनमें से पत्थर के औज़ार आज तक पाए जाते हैं। इनमें से कुछ औज़ारों का उपयोग माँस और हड्डी को काटने, वृक्षों की छाल निकालने, जानवरों की खाल उतारने, फलों

क्या आपको ज्ञात है ये पत्थर के औज़ार कहाँ पाए गए ?

ये औज़ार अक्सर नदियों के कगारों में मिलते हैं, जहाँ प्राचीन मानव जंगली जानवरों के शिकार की खोज में घूमता–फिरता था या गुफ़ाओं में मिलते हैं, जहाँ मानव रहता था। इस युग में पत्थर के औज़ारों का खूब इस्तेमाल होता था, इसलिए इसे **पाषाण युग** कहते हैं।

इनका प्रयोग किस तरह किया जाता था ?

मनुष्य अपनी भोजन–सामग्री के लिए लगभग पूरी तरह प्रकृति पर निर्भर था। अपने प्रारंभिक औज़ारों से वह अनेक काम लेता था, जैसे मरे हुए पशुओं की खाल उतारना, उनका माँस काटना तथा उनकी हड्डियों को अलग करना आदि। धीरे–धीरे अपने अनुभवों से उसने सीखा कि पत्थरों को रगड़कर किस प्रकार चिंगारी निकाली जाती है और खास ज़रूरतों के लिए किस तरह के औज़ार बनाए जाते हैं।

स्रोत – *हमारे अतीत–1*, एन.सी.ई.आर.टी., पृ. 13

को काटने और खाद्य कंद-मूलों को खोदकर निकालने के लिए किया जाता था। औज़ारों का उपयोग लकड़ी काटने और शरीर पर पहनने के लिए जानवरों की खाल को सीने के लिए भी किया जाता था। इनमें से कुछ औज़ारों में शिकार के लिए हड्डी या लकड़ी के हत्थे भी लगे रहते होंगे। औज़ारों का खास महत्त्व होने के कारण लोग ऐसे स्थानों की तलाश करते थे, जहाँ अच्छी गुणवत्ता के पत्थर आसानी से उपलब्ध हों। ऊपर प्राचीन मानव द्वारा उपयोग किए जाने वाले कुछ औज़ारों के चित्र दिए गए हैं।

पिछले पृष्ठ पर दिए गए चित्र हाथ से बने पत्थर के औज़ारों के हैं। उन्हें ध्यानपूर्वक देखिए।

क.– ये पत्थरों से बने प्राचीनतम औज़ार हैं।

ख.– इन्हें कई हज़ार साल बाद बनाया गया।

ग. – इन्हें और बाद में बनाया गया।

घ. – इन्हें लगभग 10 हज़ार साल पहले बनाया गया था।

ङ.– ये गुटिका (प्राकृतिक पत्थर) हैं।

आओ याद करें

1. शिकारियों और भोजन संग्रह करने वालों ने गुफ़ाओं और पत्थरों के आवासों में रहना क्यों चुना?
2. प्राचीन काल में लोग एक स्थान से दूसरे पर रहने क्यों जाते थे?
3. लोग ऐसे स्थानों को ढूँढ़ने का प्रयास क्यों करते थे, जहाँ अच्छी गुणवत्ता के पत्थर आसानी से उपलब्ध हों?
4. फ्रांस में चित्रों वाली गुफ़ा के पुरास्थल की खोज किसने की थी?

आओ चर्चा करें

5. शिकारियों और भोजन संग्रहकर्ताओं के जीवन के संदर्भ में कोई लिखित प्रमाण नहीं हैं। वे कौन से अन्य प्रमाण हैं जो शिकारियों और संग्रहकर्ताओं के जीवन पर प्रकाश डालते हैं?
6. क्या हमारे समाज में ऐसे लोग हैं जिनके जीवन किसी भी तरीके से शिकारियों और संग्रहकर्ताओं के जीवन के समान हैं? ये किन मामलों में समान हैं?

आओ करके देखें

7. अपनी अभ्यास पुस्तिका में दो कॉलम बनाएँ–पहले कॉलम में शिकारियों और संग्रहकर्ताओं द्वारा खाए जाने वाले पदार्थों को सूचीबद्ध करें। दूसरे कॉलम में अपने द्वारा खाए जाने वाले खाद्य पदार्थों के नाम लिखें। इनका विश्लेषण करें और दोनों में पाई गई समानताओं और अंतरों को लिखें।
8. प्राचीन मानव द्वारा उपयोग किए जाने वाले और उन्हीं कार्यों के लिए हमारे द्वारा आज उपयोग किए जाने वाले औज़ारों के चित्र बनाएँ अथवा उनके चित्र एकत्रित करें।

प्रारंभिक मानव

बात है यह बड़ी पुरानी,
यह है सच्ची एक कहानी,
जंगल में रहते थे मानव,
और पीते थे नदी का पानी।

कंद-मूल-फल खा लेते थे,
और किया करते थे शिकार,
दूर-दूर तक घूमा करते,
पाने को अपना आहार।

ना थीं सड़कें, ना थी गाड़ी,
ना होती थी खेती-बाड़ी,
ना ही शहर थे, ना थे गाँव,
ना थीं रेलें, ना थी ट्रॉम।

नहीं हुआ करते थे तब घर,
और ना होते थे औज़ार,
अंधेरी गुफ़ाओं में सोते थे,
पत्थर थे उनके हथियार।

कभी-कभी जब फ़ुरसत मिलती,
बैठ के वो सोचा करते थे,
नदी कहाँ से लाती है जल,
पेड़ों पर कैसे लगते फल!

कैसे उग जाता है पौधा?
रात को क्या सूरज भी सोता?
क्यूँ जंगल में लगती आग?
देख जिसे सब जाते भाग!

अपने कुछ प्रश्नों का उसने,
खुद कैसे पाया जवाब,
इसे जानने को अब तुमको,
पढ़ना होगा अगला पाठ।

—इन्दू कुमार

3

आरंभिक खोजें और आविष्कार

जैसा कि तुम जानती हो, जब मानव जंगल में रहता था, वह स्थिर जीवन व्यतीत नहीं करता था। भोजन की तलाश में उसे एक स्थान से दूसरे स्थान तक भटकना पड़ता था। जानवरों के शिकार तथा खाने योग्य जड़ों को खोदकर निकालने के लिए वह पत्थर के औज़ारों और हथियारों का प्रयोग करता था। शायद कभी पत्थरों के औज़ार बनाते वक्त उससे चिंगारी निकलते देख मनुष्य ने जाना कि आग कैसे जलाई जा सकती है। आग जलाना सीख लेने से उसका जीवन काफ़ी सरल हो गया। गुफ़ा के बाहर आग जलाकर वह जंगली जानवरों के भय से बचा रहता था। निरंतर सोचने, विचार करने और बारीकी से आसपास घट रही घटनाओं का अवलोकन करने के कारण वह खेती करना सीख पाया। इसी तरह उसने पहिए का आविष्कार भी किया। इन खोजों और आविष्कारों के कारण ही बाद में स्थिर जीवन की शुरुआत हो सकी। कैसे? यही आप इस पाठ में पढ़ेंगी।

अध्याय-1 में हमने पढ़ा कि शिकारी और भोजन संग्रहकर्ता बस्ती बसाकर नहीं रहते थे। उन्हें जहाँ खाने के लिए जानवर और पेड़-पौधे मिल जाते थे, वे वहीं चले जाते थे। बाद में आग जलाना सीखने, पहिए के आविष्कार और खेती की शुरुआत के पश्चात प्राचीन मानव की जीवन शैली में अत्यधिक बदलाव आ गया। इन खोजों और आविष्कारों से मानव के स्थिर जीवन की शुरुआत हुई।

संभवत: अफ्रीका के लोगों ने सबसे पहले 8 से 10 लाख वर्ष पूर्व खाना पकाने के लिए आग का उपयोग शुरू किया। लोग आग के विषय में हमेशा से ही जानते थे कि बिजली गिरने पर प्राकृतिक रूप से आग लग जाती थी अथवा जब दो पत्थरों को एक-दूसरे पर घिसा जाता था, तो आग निकलती थी। संभवत: सबसे पहले आग का उपयोग दो पत्थरों के एक-दूसरे से टकराने से या उन पर बिजली गिरने पर प्राकृतिक रूप से निकलने वाली आग से या दो चट्टानों के परस्पर टकराने से निकली आग से शुरू हुआ था। फिर उन्होंने दो चकमक पत्थरों को एक-दूसरे पर घिसकर अथवा लकड़ी की दो छड़ियों को आपस में रगड़कर आग जलाने के तरीके सीखे। आग की खोज बहुत पुरानी है। संभवत: लोगों ने अपने शरीर पर जानवर की खाल या पत्तियाँ पहनने से पहले आग जलाना सीख लिया था। आग की खोज से पहले ही प्राचीन मानव ने पत्थर के नुकीले औज़ार बनाना शुरू कर दिया था।

आग

एक समूह में आदि मानव,
लेकर बैठे थे कुछ पत्थर–
कुछ चपटे, कुछ थे नुकीले,
कुछ जैसे हों मोटी कीलें।

कुछ कुदाल, कुछ भाले जैसे,
कुछ में थी चाकू-सी धार,
पत्थर से पत्थर को मार,
बना रहे थे वो हथियार।

टकराया पत्थर से पत्थर,
तब उससे निकली चिंगारी,
पास ही था पत्तों का ढेर,
आग सुलगते लगी न देर।

सीख लिया जब आग जलाना,
सर्दी का मौसम बना सुहाना।
उनकी गुफ़ा हो गई रोशन,
खाने लगे पकाकर खाना।

– इन्दू कुमार

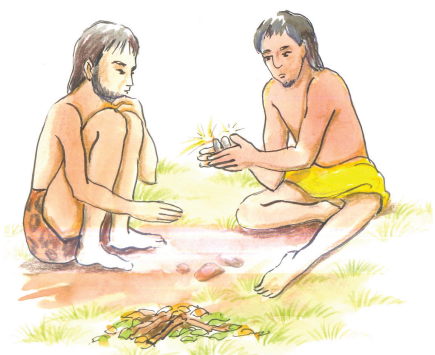

धीरे-धीरे मनुष्य आग का विभिन्न प्रकार से उपयोग करने लगे। वे जानवरों का माँस भूनकर तथा कंद-मूल पका कर खाने लगे। वे जंगली जानवरों से सुरक्षा के लिए गुफ़ा के बाहर आग जलाते थे तथा रोशनी के लिए भी वे आग का उपयोग करने लगे।

क्रियाकलाप

1. ऐसे खाद्य पदार्थों की अलग-अलग सूची बनाइए, जिन्हें पकाकर खाया जाता है और जिन्हें बिना पकाए खाया जाता है।
2. हम फलों को क्यों नहीं पकाते?
3. यदि हम दालों, अनाजों, माँस आदि को बिना पकाए खाने का प्रयास करेंगे तो क्या होगा?

आग जलाना सीख लेना बहुत महत्त्वपूर्ण था। आग का उपयोग अनेक अन्य कार्यों के लिए भी किया जा सकता था, जैसे प्रकाश के स्रोत के रूप में, खाना-पकाने और जानवरों को डराकर दूर रखने के लिए। मनुष्य को पहले ही पता लग चुका था कि अधिकांश जानवर आग से डरते हैं। अत: जलता अलाव जंगली जानवरों से उनकी सुरक्षा करता था। आग उत्पन्न करने की जानकारी होने से उनके लिए अपेक्षाकृत ठंडे स्थानों पर जाना संभव हो गया क्योंकि आग से उन्हें गर्मी मिलती थी।

लाल बिंदुओं से चिह्नित स्थान कुछ ऐसे विशिष्ट स्थलों को इंगित करते हैं, जहाँ प्राचीन मानव रहते थे और उन्होंने वहाँ आग का उपयोग किया था।

स्रोत – विश्व इतिहास के कुछ विषय, कक्षा 11 के लिए इतिहास की पाठ्यपुस्तक, एन.सी.ई.आर.टी., पृ. 14

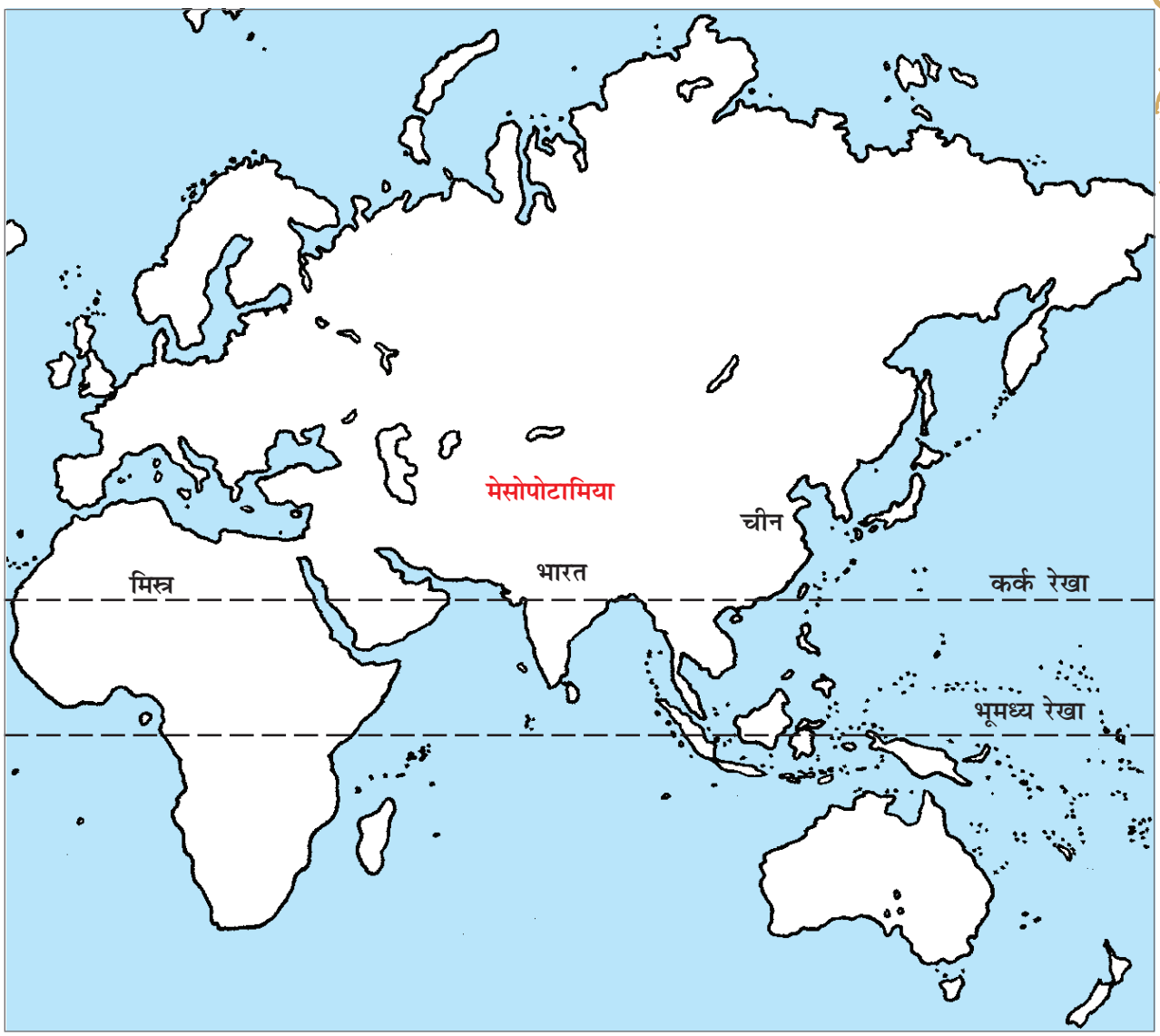

आग के संकेत – कुछ महत्त्वपूर्ण स्थान

अध्याय-1 में दिए गए मानचित्र को देखें और कुरनूल की गुफ़ाओं का पता लगाएँ। यहाँ राख के कुछ अवशेष पाए गए हैं। इससे पता चलता है कि लोग आग के उपयोग से परिचित थे। दक्षिण अफ्रीका में स्वार्टक्रांस की गुफ़ाओं में जली हड्डियाँ भी पाई गई हैं, जो 14 लाख वर्ष पुरानी हैं। इनसे उस काल में आग के उपयोग का पता चलता है।

पहिए का आविष्कार

पहिए का प्राचीनतम उदाहरण मेसोपोटामिया से मिला है, जो आधुनिक ईराक के आसपास का क्षेत्र है। पहिया बनाने का विचार संभवत: पेड़ के कटे लुढ़कते हुए लट्ठे से प्रेरित हुआ होगा। समय के साथ लोगों ने अनेक लट्ठों को ज़मीन पर एक दूसरे के पास-पास रखना शुरू किया और वे उनके सहारे भारी चीज़ों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने लगे। इन लट्ठों की गोल टुकड़ियाँ काटकर उन्हें धुरी की कीली से आपस में जोड़ दिया गया, जिससे पहिए का विकास हुआ।

मेसोपोटामिया आधुनिक ईराक में टिगरिस और यूफ्रेटीज़ नदियों के बीच दक्षिण-पश्चिम एशिया का एक प्राचीन क्षेत्र है।

पहिया मेसोपोटामिया में खुदाई से निकला

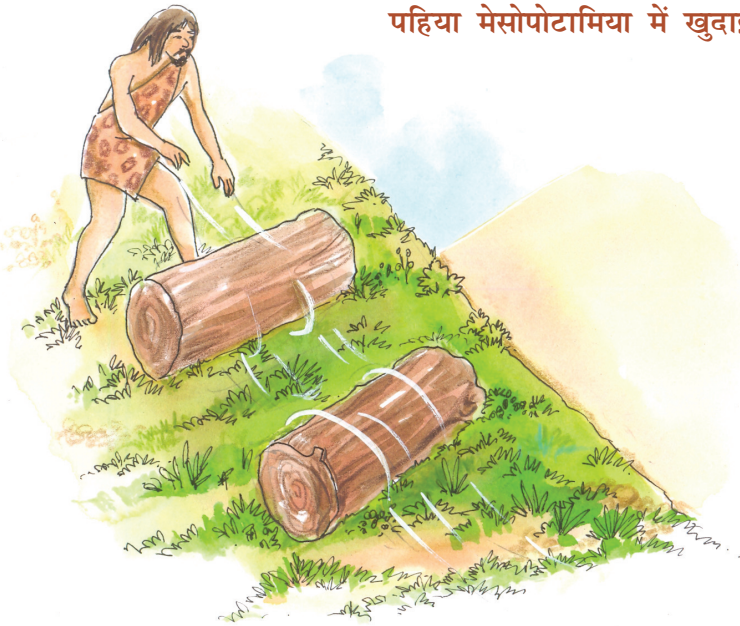

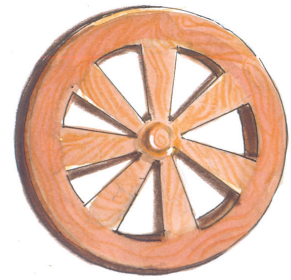

पहिया

बच्चो, इस चित्र को ध्यान से देखो। इस चित्र में आदि मानव भारी लकड़ियों को ऊपर से धकेल रहा है। उसने पाया कि बेलनाकार वस्तुएँ कम बल लगाने से ही गतिमय हो जाती हैं। इस तरह मनुष्य के दिमाग में पहिए का विचार पनपा और उसने पहिए की खोज की। बच्चो, आपने ऐसी कितनी वस्तुएँ देखी हैं, जिनमें पहिए का इस्तेमाल होता है ?

कृषि के विकास और स्थिर जीवन की शुरुआत के साथ लोगों के दैनिक जीवन में पहियों के उपयोग का महत्त्व बढ़ गया। बैल और साँड जैसे जानवरों को गाड़ी में जोता जाने लगा। यह गाड़ी लकड़ी के अरेदार पहियों से जुड़ी रहती थी। पहियों के उपयोग ने मनुष्य के जीवन को बेहतर बना दिया। वे स्वयं भी और वस्तुओं को भी एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने लगे। बाद में रथ में घोड़ों को जोता जाने लगा क्योंकि वे रथ को अधिक तेज़ी से ले जाते थे। रथ का उपयोग परिवहन के साथ-साथ युद्ध क्षेत्र में भी किया जाने लगा।

एक दिन मानव ने ढलान पर
देखा एक लुढ़कता लट्ठा
गोल-गोल लुढ़का ढलान पर
पहुँचा नीचे फैले मैदान पर।

देख उसे कुछ उसने सोचा
सिर खुजलाया किया विचार
मैं तो इसको ढो-ढो थकता
पर यह तो खुद भी चल सकता।

बाँध इन्हें गर मैं लुढ़काऊँ
रख इन पर भारी सामान
पल में काम मेरा हो जाए
मेहनत भी मेरी बच जाए।

फिर उसने कुछ और भी आँका
लट्ठे को टुकड़ों में काटा,
एक धुरी से दो को बाँधा
धीरे-धीरे किया सुधार
यूँ हो गया पहिया तैयार।

—इन्दू कुमार

पहिए से मानव जीवन में क्या परिवर्तन आया?

समय गुज़रने और प्रौद्योगिकी के विकास के साथ पहिए के रूप में भी विकास हुआ। यदि तुम अपने आसपास देखो, तो पाओगे कि यातायात के विभिन्न साधन, जैसे साइकिलें, स्कूटर, कारें, बसें और रेलगाड़ियाँ विभिन्न प्रकार के पहियों पर चलती हैं।

परिवहन का साधन होने के साथ-साथ पहिए के आविष्कार के कारण प्रौद्योगिकी का भी व्यापक विकास हुआ। इसके कुछ प्रमुख उपयोगों में निम्नलिखित शामिल हैं–

1. जलचक्की

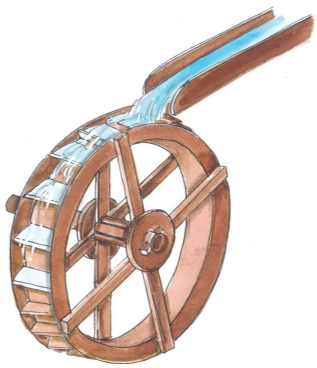

2. तकली

3. चरखा

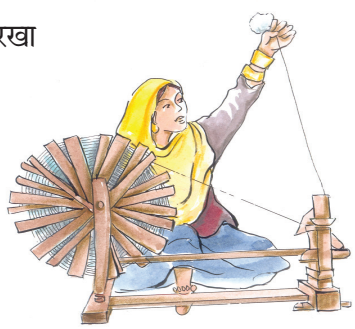

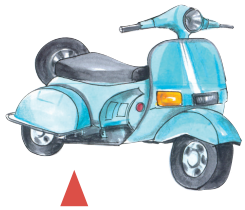

बच्चो, इस चित्र को ध्यान से देखो। इस चित्र में आधुनिक यातायात के साधनों में पहिए का प्रयोग दिखाया गया है। इसके अलावा अन्य यातायात के साधनों के बारे में बताओ, जिसमें पहिए का प्रयोग होता है।

क्या आपने कभी जलचक्की को देखा है? आज भी हमारे गाँवों में इसका प्रयोग किया जाता है तथा बिजली बनाने में भी जलचक्की का प्रयोग किया जाता है।

क्या आप जानते हैं कि यह किस चीज़ का चित्र है? इसे 'तकली' कहते हैं। इससे सूत कातने का काम किया जाता है। क्या आपने अपनी दादी या नानी के पास इसे देखा है या इसके विषय में सुना है? तो देखा बच्चो, कैसे छोटी-छोटी चीज़ों में पहिए का प्रयोग होता है!

बच्चो, इस चित्र को भी ध्यान से देखो। यह किस चीज़ का चित्र है? इसे चरखा कहते हैं। इससे भी सूत कातने का काम किया जाता है। क्या आपको इसे देखकर किसी जाने-माने व्यक्ति की याद आती है? बताइए, वह महान व्यक्ति कौन थे?

खेती की शुरुआत

जैसा कि पहले ही अध्याय-1 में बताया गया है, लोग जंगली जानवरों का शिकार करते थे, मछलियाँ और पक्षी पकड़ते थे, फल, कंद-मूल, गिरियाँ, बीज, पत्तियाँ, डंठल और अंडे आदि एकत्रित करते थे।

लगभग 10,000 वर्ष पहले, विश्व की जलवायु में महत्त्वपूर्ण बदलाव हुए। इनके कारण अनेक क्षेत्रों में घास-स्थलों का विकास हुआ। इस काल में गेहूँ, जौ और चावल आदि अन्न देने वाले अनेक घास-पौधे प्राकृतिक रूप से विभिन्न क्षेत्रों में उगने लगे थे। लोग संभवत: इन खाद्यान्नों को भोज्य पदार्थ के रूप में एकत्रित करते थे। फिर उन्होंने यह सीखा कि ये कहाँ उगते हैं और कब पकते हैं। इससे उन्हें स्वयं इन पौधों को उगाने का विचार आया। उन्होंने संभवत: अनेक चीज़ें पैदा होते देखी होंगी।

खेती

अन्न इकट्ठा करके इक दिन,
रही थीं वो सब उसको बीन।
कुछ दाने रह गए ज़मीन पर,
बारिश ने आ उनको सींचा।

पहले अन्न से अंकुर फूटे,
फिर बन गए वो पौधे,
बच्चों ने तब उनको देखा,
और फिर माँ को भी दिखलाया।

माँ की कुछ-कुछ समझ में आया,
गिलहरी और चिड़ियों से उसने,
पहरा देकर उन्हें बचाया।

एक दिन सब रह गए चकित,
जब देखी लहराती खेती,
अन्न गिरा था जो ज़मीन पर,
भरी बालियाँ थी उससे ही।

देख फ़सल तब उन्होंने सोचा,
अब जीवन कुछ अच्छा होगा,
नहीं घूमना पड़ेगा हमको,
अब भोजन की खोज में दर-दर।

एक जगह ही रहकर अब हम,
खेती कर सकते ज़मीन पर ।

– इन्दू कुमार

1. बीज डंठलों से टूटकर भूमि पर गिर गए।

इस चित्र को देखें। इसमें कुछ महिलाएँ एक साथ अनाज इकट्ठा कर रही हैं। ज़रा ध्यान से देखें वे सभी एक गुफ़ा के पास बैठी हैं। आदि मानव गुफ़ाओं में निवास करते थे। सभी काम मिल-बाँटकर करते थे। बच्चो, हमें भी सबके मानवीय श्रम का सम्मान करना चाहिए।

2. उनसे नए पौधे उग आए।

दिए गए चित्र को ध्यान से देखें। उसमें एक महिला गुफ़ा के पास एक बच्चे के साथ खड़ी है और दूसरा बच्चा बीज में से उगे हुए पौधे को देख रहा है।

इस चित्र में वही बच्चा उगे हुए पौधे को देखकर अपनी माँ को बुलाता है। शायद इसी प्रकार कृषि का आविष्कार हुआ। सोचो अगर कृषि का आविष्कार नहीं हुआ होता, तो हमें भोजन कहाँ से मिलता?

संभवत:, उन्होंने पौधों की देखभाल करना और पक्षियों और जानवरों से उनकी रक्षा करना शुरू कर दिया, जिससे वे उग सकें और बीज पक सकें। संभवत: खेती की खोज इसी प्रकार हुई और लोगों ने फ़सलें उगानी शुरू कर दीं।

इस तरह जब मनुष्यों ने बीज को पौधों और पौधों को फ़सल में बदलते देखा, तो वे आश्चर्यचकित रह गए। उन्होंने जाना कि कैसे बीजों से खेती की जा सकती है। बच्चो, क्या आपने कभी कोई पौधा उगाया है? उसकी देखभाल की है? उसे बढ़ते हुए देखा है? जब हमारा लगाया हुआ पौधा बड़ा होता है, तो कितनी खुशी होती है! दिए गए चित्र में भी आदि मानव फ़सल को बढ़ते हुए देख कर खुश हो रहे हैं।

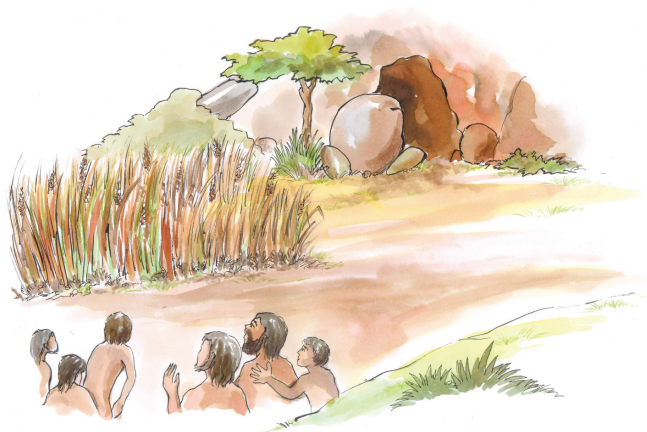

बच्चो, ऊपर चित्र में महिलाएँ व पुरुष एक साथ खेतों से बालियाँ चुन रहे हैं। क्या आपने अपने गाँव में या आसपास महिलाओं व पुरुषों को साथ-साथ खेती करते हुए देखा है? क्या आप बता सकते हैं कि किस चीज़ की खेती की जा रही है? गोल घेरे में किस अनाज का चित्र है?

अध्याय-1 में दिए गए मानचित्र को देखिए। आपको अनेक नीले चौकोर खाने दिखाई देंगे। इनमें प्रत्येक खाना उस विशिष्ट स्थल को इंगित करता है, जहाँ पुरातत्वविज्ञानियों को प्राचीन किसानों और चरवाहों के साक्ष्य मिले हैं। इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण स्थल उत्तर-पश्चिम में, आज के कश्मीर में और पूर्व तथा दक्षिण भारत में मिले हैं। यह पता लगाने के लिए कि क्या ये स्थल किसानों और चरवाहों की बस्तियाँ थे, वैज्ञानिक पेड़-पौधों और जानवरों की हड्डियों के साक्ष्य का अध्ययन करते हैं। एक जगह से जले अनाज के दानों के अवशेष मिले हैं। वैज्ञानिक इन दानों की पहचान कर सकते हैं, जिससे हमें पता चल जाता है कि वहाँ किसानों की बस्तियाँ थीं और इस उपमहाद्वीप के विभिन्न भागों में अनेक फ़सलें उगाई जाती थीं।

दिए गए चित्र को ध्यान से देखो। इसमें हमें कृषि का विकसित रूप दिखाई देता है। धीरे-धीरे मानव सभ्यता का विकास हुआ। मनुष्य गुफ़ाओं की जगह घरों मे रहने लगे। शिकार के स्थान पर पशुपालन करने लगे। महिलाओं और पुरुषों के आपसी सहयोग से अनाज का उत्पादन भी शुरू हो गया।

देखा बच्चो, मानव सभ्यता का विकास कैसे होता है? कैसे मनुष्य गुफ़ाओं के स्थान पर स्वयं निर्मित मकानों मे रहने लगे? बच्चो, आपने अपने आसपास कितनी तरह के मकान देखे हैं?

खेती-बाड़ी और स्थिर जीवन की शुरुआत

जब लोगों ने पौधे उगाना शुरू कर दिया तो यह ज़रूरी हो गया कि वे लंबे समय तक एक ही स्थान पर रहकर पौधों की देखभाल करें, उनमें पानी दें और निराई करें तथा फ़सल के पकने तक जानवरों और पक्षियों को उनसे दूर रखें। इन क्रियाकलापों के कारण मनुष्य अधिक स्थिर व व्यवस्थित जीवन जीने लगा।

आओ याद करें

1. पहिए का प्राचीनतम साक्ष्य हमें कहाँ पर मिलता है?
2. आग का उपयोग किन-किन तरीकों से किया जाता था? आग के अन्य उपयोग क्या हैं?
3. गेहूँ, जौ और चावल आदि अनेक अन्नदार घास-पौधे किस काल में प्राकृतिक रूप से उगते थे?
4. कृषि की खोज से मानव के जीवन में स्थिरता कैसे आ गई?

आओ चर्चा करें

5. गेहूँ और चावल के उत्पादन के विभिन्न चरण क्या हैं? इनकी बोआई, निराई, कटाई, भंडारण और बिक्री में कौन लोग शामिल होते हैं?
6. लुढ़कते पेड़ के लट्ठे को ध्यान से देखने से संभवत: पहिए का आविष्कार हुआ था। कुछ ऐसे ही अन्य निरीक्षणों के बारे में बताइए, जिनके आधार पर अन्य युक्तियों एवं साधनों का आविष्कार हुआ होगा। कुछ ऐसे दिलचस्प निरीक्षण बताइए, जो आपके अपने हैं?

आओ करके देखें

7. अपनी अभ्यास पुस्तिका में दो कॉलम बनाइए। एक कॉलम में शिकारी और संग्रहकर्ता द्वारा किए जाने वाले आग के उपयोग और दूसरे कॉलम में हमारे द्वारा आजकल किए जाने वाले आग के उपयोगों को लिखिए। इनमें क्या-क्या समानता और अंतर दिखाई देते हैं?
8. यातायात के उन विभिन्न साधनों के चित्र बनाइए, जिनका हम आज उपयोग कर रहे हैं। इनमें से वे साधन कौन से हैं जिनका उपयोग आदि मानवों द्वारा भी किया जाता था?
9. विभिन्न प्रकार के अनाजों का भंडारण ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में किस प्रकार किया जाता है, इसके बारे में जानकारी एकत्रित कीजिए।

4

प्राचीनतम नगरों की गाथा
हड़प्पा की सभ्यता

इन नगरों की खोज किस प्रकार हुई थी

भारतीय उपमहाद्वीप के प्राचीनतम नगर हड़प्पा सभ्यता के शहर हैं। इन नगरों का विकास लगभग 4700 वर्ष पूर्व हुआ था। लगभग 150 वर्ष पूर्व जब अंग्रेज़ों द्वारा पंजाब में पहली बार रेल लाइनें बिछाई जा रही थीं, तब इंजीनियरों को खुदाई करते हुए आज के पाकिस्तान में स्थित हड़प्पा के स्थल का पता लगा। उन्हें यह एक ऐसे टीले जैसा लग रहा था, जो अच्छी गुणवत्ता की बनी-बनाई ईंटों का समृद्ध स्रोत था। इसलिए उन्होंने इस शहर की पुरानी इमारतों की दीवारों से हज़ारों ईंटें रेल लाइन के निर्माण के लिए निकाल लीं। इसके परिणामस्वरूप शहर की अनेक इमारतें या ढाँचे पूरी तरह से नष्ट हो गए।

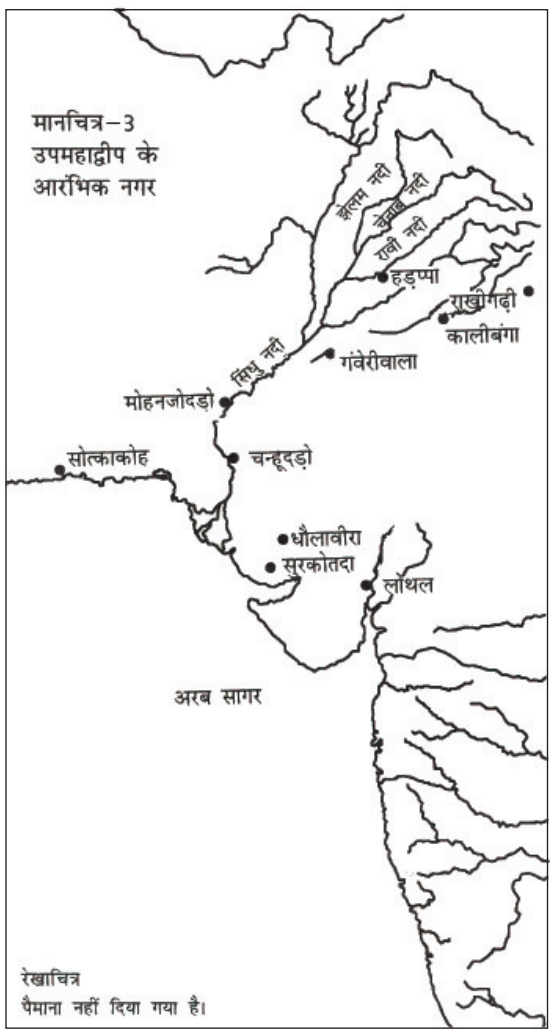

स्रोत – *हमारे अतीत–1*, एन.सी.ई.आर.टी., पृ. 33

इसके बाद लगभग अस्सी वर्ष पूर्व पुरातत्त्वविदों द्वारा उस स्थल की खुदाई की गई, तब उन्हें पता लगा कि यह शहर इस उपमहाद्वीप के प्राचीनतम नगरों में से एक था। चूँकि सबसे पहले हड़प्पा नगर की खोज हुई थी, अतः जिन अन्य स्थानों पर ऐसे ढाँचे (और अन्य अवशेष) मिले, उन्हें भी हड़प्पा सभ्यता के अंतर्गत मान लिया गया।

इन नगरों की क्या विशेषता थी

इनमें से अनेक नगर दो या अधिक भागों में बँटे थे। सामान्यतः, पश्चिम की ओर का भाग छोटा लेकिन अधिक ऊँचा था।

भारत में शहरी जीवन की शुरूआत हड़प्पा सभ्यता से हुई। पुरातत्त्व विज्ञानियों ने इस प्राचीन सभ्यता को सिंधु घाटी की सभ्यता का नाम दिया क्योंकि इस सभ्यता से जुड़ी हुई अन्य चीज़ें सिंधु घाटी में पाई गईं। हड़प्पा शहर आज पाकिस्तान में स्थित है। भारत में हड़प्पा की सभ्यता के अवशेष कुछ शहरों, जैसे, चंडीगढ़ के पास रोपड़ में, अहमदाबाद के पास लोथल में, राजस्थान के कालीबंगा में और सिंध प्रांत के कोट-दीजी में मिले हैं।

पुरातत्वविज्ञानियों के अनुसार यह नगर दुर्ग या गढ़ी था।

प्राय: प्रत्येक भाग के चारों ओर पक्की ईंटों की दीवारें बनाई गई थीं। कुछ नगरों के नगर दुर्गों में विशेष भवन बनाए गए थे। उदाहरण के लिए, मोहनजोदड़ो में एक विशाल हौज़ बनाया गया था, जिसे विशाल स्नानागार (हमाम) कहते थे।

संभवत: लोग विशेष अवसरों पर इसमें डुबकी लगाते थे। अन्य नगरों, जैसे कालीबंगा और लोथल, में अग्नि-वेदियाँ थीं। कुछ शहरों, जैसे मोहनजोदड़ो, हड़प्पा और लोथल में बड़े-बड़े भंडार-घर थे।

नगर दुर्ग-शहर के अंदर या उसके निकट स्थित किला जहाँ से पूरा शहर दिखाई देता है।

हड़प्पा के नगर दो भागों मे बँटे हुए थे। ऊँचे चबूतरे पर बसे हुए ऊपरी भाग संभवत: गढ़ी या नगर दुर्ग थे। इस भाग में सार्वजनिक भवन, धान्यागार, कार्यशालाएँ और धार्मिक इमारतें थीं। नगर दुर्ग में सबसे प्रभावशाली इमारतें धान्यागारों की थीं। वे बड़ी सावधानी से आयताकार रूप में बनाई गई थीं। नगर का दूसरा भाग, जो काफ़ी बड़ा था, निचले हिस्से में था। यहाँ लोग रहते थे और अपना-अपना काम-धंधा करते थे। यदि नगर पर हमला होता या बाढ़ का खतरा बढ़ जाता, तो लोग गढ़ी में जाकर शरण लेते थे।

मोहनजोदड़ो में विशाल स्नानागार के अवशेष

हड़प्पा के नगरों में दीवार बनाने के लिए ईंटों की चिनाई का नमूना

स्रोत – *हमारे अतीत-1*, एन.सी.ई.आर.टी., पृ. 34

सबसे पुराने शहर

सिंधु नदी की घाटी में तब,
पहले-पहले शहर बसे थे,
सभ्यता वह थी बहुत प्राचीन,
पर तकनीक लगती नवीन।

ईंटों के पक्के मकान थे,
पानी के विशाल हमाम थे,
ढँकी नालियाँ थीं निकास की,
और सड़कें चौड़ी पक्की थीं।

वहाँ गढ़ी एक ऊँची थी,
अन्न रखने को धान्यागार था,
खेती तब होती थी हल से,
घरों में जानवर भी थे पलते।

—इन्दू कुमार

सड़क

कुआँ

स्रोत – *हमारे अतीत–1*, एन.सी.ई.आर.टी., पृ. 35

घर, नालियाँ और सड़कें

सामान्यत: घर एक या दो मंज़िला होते थे, जिनमें कमरे आँगन के चारों ओर बने होते थे। अधिकांश घरों में स्नानघर अलग हिस्से में होते थे और कुछ में जल की आपूर्ति के लिए कुएँ होते थे। इनमें से अनेक शहरों में ढँकी नालियाँ थीं। प्रत्येक नाली में हलकी ढलान होती थी, जिससे पानी आसानी से बह जाता था। अक्सर, घरों की नालियाँ सड़कों की नालियों से जुड़ी रहती थीं और छोटी नालियाँ बड़ी नालियों में खुलती थीं। घर, नालियाँ और सड़कें, तीनों की योजना संभवत: एक साथ बनाई जाती थी।

मकान ईंटों के बने होते थे और उनकी दीवारें मोटी और मज़बूत होती थीं। दीवारों पर पलस्तर और रंग किया जाता था। छतें सपाट होती थीं। खिड़कियाँ कम, दरवाज़े अधिक होते थे। दरवाज़े शायद लकड़ी के बने होते थे। रसोई में एक चूल्हा होता था और वहीं पर धान्य तथा तेल रखने के लिए मिट्टी के बड़े-बड़े घड़े रहते थे। रसोई के पास ही नाली या मोरी होती थी। स्नानागार मकान के एक अलग हिस्से में बनाए जाते थे और उनकी नालियाँ सड़क की नाली से मिली होती थीं। सड़क की नाली सड़क के किनारे-किनारे चलती थी, ताकि उसे साफ़ रखा जा सके। नालियाँ पत्थर की सिलों से ढँकी रहती थीं।

मुहर

स्रोत – *हमारे अतीत–1*, एन.सी.ई.आर.टी., पृ. 35

नगरीय जीवन

नगर की इमारतों की योजना संभवत: शासक वर्ग द्वारा बनाई जाती थी। संभवत: शासक वर्ग धातु, रत्न-मणियाँ और अन्य वस्तुएँ लाने के लिए अपने आदमियों को दूर-दूर तक के इलाकों में भेजते रहे होंगे। ये लोग सुदूर देशों से लौटने पर अभीष्ट सामग्री या सामान के साथ-साथ विभिन्न कहानियाँ भी लेकर आते थे।

उनके पास यहाँ ऐसे लोग थे जो लिखना जानते थे, जो मुहरें तैयार करने में सहायता करते थे और संभवत: अन्य प्रकार की सामग्री पर भी लिखते थे, जो अब मौजूद नहीं है।

हड़प्पा की एक मुहर

इस मुहर के ऊपर के चिह्न खास लिपि में थे। यह इस उपमहाद्वीप में पाए गए लेखन का एक प्राचीनतम उदाहरण है।

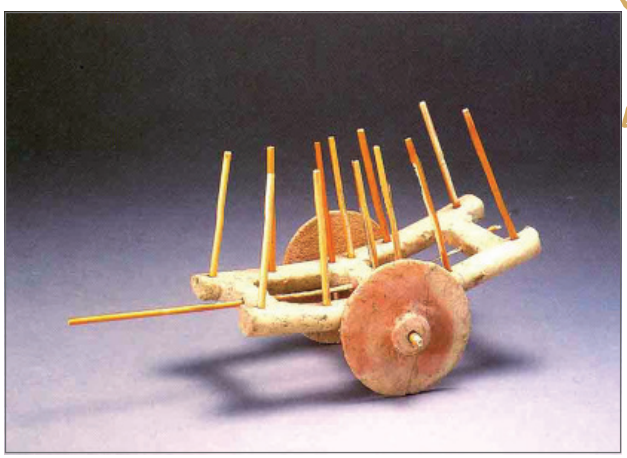

मिट्टी के खिलौने

स्रोत – *हमारे अतीत–1*, एन.सी.ई.आर.टी., पृ. 35 और 38

इनके अतिरिक्त, ऐसे पुरुष और महिलाएँ, शिल्पकार आदि भी थे, जो या तो अपने घरों में अथवा विशेष कर्मशालाओं में विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ बनाते थे। टेराकोटा के ऐसे अनेक खिलौने पाए गए हैं, जिनसे अवश्य ही बच्चे खेलते होंगे।

नगरों में लोगों के लिए भोजन

जहाँ अनेक लोग नगरों में रहते थे, वहीं अन्य लोग गाँवों में रहकर फ़सल उगाते थे और पशुपालन करते थे। ये किसान और पशुपालक नगरों में रहने वाले शिल्पकारों, लिपिकारों और शासकों को भोजन सामग्री प्रदान करते थे। तत्कालीन पेड़-पौधों के अवशेषों से हमें पता चलता है कि हड़प्पा सभ्यता के लोग गेहूँ, जौ, दालें, मटर, धान, तिल, अलसी और सरसों उगाते थे।

मिट्टी की जुताई करने और बीज बोने के लिए 'हल' नामक एक नए उपकरण का इस्तेमाल शुरू हो गया था। यद्यपि, उस समय के वास्तविक हल (जो संभवत: लकड़ी के बने होते थे) आज मौजूद नहीं हैं, लेकिन उन हलों के खिलौने के प्रतिरूप आज भी उपलब्ध हैं। इस क्षेत्र में क्योंकि अधिक वर्षा नहीं होती थी, अत: किसी न किसी प्रकार की सिंचाई प्रणाली रही होगी। इसका अर्थ है कि जल का भंडारण किया जाता था और पौधों के उगने की अवधि में खेतों में पानी की आपूर्ति की जाती थी।

हड़प्पा सभ्यता के लोग गाय, बैल, भेड़-बकरी और भैंस पालते थे। बस्तियों के आसपास पानी और चरागाह उपलब्ध थे। तथापि शुष्क गर्मियों के महीनों में जानवरों के बड़े झुंडों को घास और पानी की तलाश में दूर-दूर तक ले जाया जाता था। वे बेर आदि फल भी एकत्रित करते थे, मछली पकड़ते थे और हिरण जैसे जंगली जानवरों का शिकार करते थे।

हड़प्पा संस्कृति के लोगों के मनोरंजन के साधन क्या थे ?

बच्चों के लिए कई प्रकार के खिलौने उपलब्ध थे। शायद आजकल के इक्कों से मिलती-जुलती मिट्टी की छोटी गाड़ियाँ, जो शायद बड़ी बैलगाड़ियों की नकल थीं। पशुओं की आकृति के खिलौने भी थे, जिनको कठपुतलियों की तरह डोर से खींचा जा सकता था।

हड़प्पा सभ्यता के लोगों के भोजन में विविधता थी। वे चक्कियों में जौ और गेहूँ को पीसकर रोटी पकाते थे और चावल भी खाते थे। दालों की जानकारी उन्हें थी। वे फल भी पसंद करते थे। माँस और मछली भी उनके भोजन का एक हिस्सा था।

हड़प्पा सभ्यता से प्राप्त आभूषण

स्रोत – *हमारे अतीत–1*, एन.सी.ई.आर.टी., पृ. 36

फ़ायान्स– पत्थर और शंख प्राकृतिक तौर पर पाए जाते हैं, लेकिन फ़ायान्स को कृत्रिम रूप से तैयार किया जाता है। बालू या स्फटिक पत्थरों के चूर्ण को गोंद में मिलाकर उनसे वस्तुएँ बनाई जाती थीं। उसके बाद उन वस्तुओं पर एक चिकनी परत चढ़ाई जाती थी। इस चिकनी परत के रंग प्रायः नीले या हल्के समुद्री हरे होते थे।

फ़ायान्स से मनके, चूड़ियाँ, कानों की बालियाँ और छोटे बर्तन बनाए जाते थे।

हमें हड़प्पा सभ्यता के बारे में जानकारी कैसे मिली?

आइए, कुछ ऐसी वस्तुओं को देखें जो हड़प्पा समूह के नगरों में पाई गई थीं। पुरातत्त्वविज्ञानियों द्वारा पाई गई अधिकांश वस्तुएँ पत्थर, सीपी व ताँबा, काँसा, सोना और चाँदी जैसी धातुओं की बनी हुई थीं, ताँबे और काँसे का उपयोग औज़ार, हथियार, आभूषण और बर्तन बनाने के लिए किया जाता था। सोने और चाँदी का उपयोग भी आभूषण और बर्तन बनाने के लिए किया जाता था। इसमें संभवतः अधिक उल्लेखनीय वस्तुएँ मनके, बाट और ब्लेड हैं।

हड़प्पा के लोगों ने पत्थरों की मुहरें बनाईं। ये सामान्यतः आयताकार हैं। हड़प्पा के लोगों ने खूबसूरत काले डिज़ाइन वाले बर्तन भी बनाए थे। कपास को शायद 7 हज़ार वर्ष पूर्व से ही मेहरगढ़ में उगाया जाता था। एक चाँदी के फूलदान के ढक्कन से जुड़े कपड़े के वास्तविक अंश और कुछ ताँबें की वस्तुएँ मोहनजोदड़ो की खुदाई में मिली थीं। पुरातत्वविज्ञानियों को वहाँ टेराकोटा (पकी मिट्टी) और काँच जड़े फ़ायान्स के बने तकुए के चक्के मिले हैं।

गुजरात में हड़प्पा समूह के नगर

कच्छ के रन में खादिर बेट पर धौलावीरा नगर का पता चला है, जहाँ पर ताज़ा जल और उर्वर ज़मीन थी। हड़प्पा समूह के कुछ अन्य नगरों के विपरीत, जो दो भागों में बँटे रहते थे, धौलावीरा तीन भागों में बँटा था, प्रत्येक भाग भारी पत्थर की दीवारों से घिरा था, जिनमें विशालकाय द्वारों से प्रवेश किया जाता था। बस्ती में बड़ा खुला मैदान भी था, जहाँ जन-समारोह होते थे। यहाँ पाई गई अन्य चीज़ों में हड़प्पा लिपि के बड़े-बड़े अक्षर शामिल हैं, जिन्हें सफ़ेद पत्थर पर उकेरा गया था और संभवतः लकड़ी में जड़ा गया था। यह एक विशिष्ट खोज है क्योंकि सामान्यतः हड़प्पा की लिपि छोटी-छोटी वस्तुओं, जैसे मुहरों आदि पर पाई गई है।

लोथल शहर गुजरात में खंभात की खाड़ी के निकट साबरमती की सहायक नदी के तट पर स्थित था। यह ऐसे क्षेत्रों के निकट बसा था, जहाँ कच्चा माल, जैसे कम कीमत वाले रत्न आसानी से उपलब्ध थे। यह पत्थर, सीपी और धातु से वस्तुएँ बनाने का महत्त्वपूर्ण केंद्र था। शहर में एक भंडारगृह भी था। इस भंडारगृह में अनेक मुहरें और मिट्टी पर मुहरों की छाप (मुद्रांकन) पाई गई है। एक गोदी क्षेत्र भी पाया गया है। इससे ज्ञात होता है कि लोथल से विदेशों में व्यापार भी किया जाता था। यहाँ पाई गई यह इमारत संभवतः मनके बनाने की कर्मशाला थी। पत्थर के टुकड़े, अर्धनिर्मित मनके, मनके बनाने के औज़ार और पूर्णनिर्मित मनके भी यहाँ पर पाए गए हैं।

हड़प्पा समूह के नगरों का पतन

हड़प्पा समूह के नगरों के पतन के बारे में कुछ विद्वान यह बताते हैं कि ऐसा नदियों के सूख जाने के कारण हुआ। कुछ का विचार है कि वनों के नष्ट

हो जाने से (पेड़ों की अंधाधुंध कटाई या निर्वनीकरण से) ऐसा हुआ। ऐसा इसलिए, क्योंकि ईंटों को पकाने के लिए और ताँबे के अयस्कों को गलाने के लिए ईंधन की आवश्यकता होती थी। साथ ही, गाय-बैल, भेड़, बकरी के विशाल झुंडों द्वारा चराई से भी शायद वनों की हरियाली नष्ट हो गई होगी। कुछ क्षेत्रों में बाढ़ आ गई थी। लेकिन इनमें से किसी भी एक कारण को सभी शहरों के अंत का कारण नहीं समझा जा सकता है। बाढ़ आने या नदी के सूखने का असर सिर्फ़ कुछ क्षेत्रों में ही हो सकता है। यह भी संभव है कि शासक-वर्ग का प्रभुत्व समाप्त हो गया हो। कारण कुछ भी रहा हो, परिवर्तन का प्रभाव बिल्कुल स्पष्ट है। सिंध और पश्चिम पंजाब (आज का पाकिस्तान) वीरान हो गए, जबकि अनेक लोग पूर्व और दक्षिण में नयी और अपेक्षाकृत छोटी बसी बस्तियों में चले गए। नए शहर लगभग 1400 वर्ष बाद अस्तित्व में आए। आप आगे की कक्षाओं में उनके विषय में पढ़ेंगे।

आओ याद करें

1. हड़प्पा समूह के शहर कब फले-फूले थे?
2. हड़प्पा समूह के शहरों का क्या महत्त्व था?
3. पुरातत्त्वविज्ञानियों को यह कैसे पता चला कि हड़प्पा सभ्यता में वस्त्र का उपयोग किया जाता था?

आओ चर्चा करें

4. चर्चा कीजिए कि हड़प्पा समूह के शहरों में खाद्यानों की आपूर्ति करने वाले किसान का जीवन उन आरंभिक मनुष्यों के जीवन से किस प्रकार भिन्न था, जो खेती-बाड़ी करते थे।
5. अक्सर नयी इमारतों के निर्माण के लिए पुरानी इमारतों को गिरा दिया जाता है। चर्चा कीजिए कि क्या पुरानी इमारतों का संरक्षण महत्त्वपूर्ण है?
6. शहर और गाँव में क्या समानताएँ और क्या-क्या अंतर हैं? हड़प्पा समूह के शहरों को किस आधार पर शहरों के रूप में वर्गीकृत किया गया है?

आओ करके देखें

7. आपके क्षेत्र में भी पुरानी इमारतें होंगी, पता कीजिए कि वे कितनी पुरानी हैं और उनकी देखभाल कौन करता है।

5

भारत के बाहर से आनेवाले लोग और उनका प्रभाव

इस पाठ में हम भारतीय सभ्यता व संस्कृति की विभिन्नताओं के विषय में जानने का प्रयास करेंगे। भारत विभिन्न सभ्यताओं व संस्कृतियों का देश है। समय-समय पर भारत में बाहर से लोग आते रहे हैं, जिनमें से कुछ भारत में ही सदा के लिए बस गए। इन विभिन्न बाहरी लोगों ने भारतीय सभ्यता व संस्कृति पर प्रभाव डाला, जिसे हम यहाँ के खान-पान, रहन-सहन, वेशभूषा, रीति-रिवाजों आदि में देख सकते हैं। इस पाठ में हम भारतीय संस्कृति पर पड़े कुछ प्रभावों को देखने का प्रयास करेंगे, विशेष रूप से तुर्कों व मुगलों के संदर्भ में। यह पाठ भारत की एकता व अनेकता को दर्शाता है।

सुलेमान पर्वत मालाएँ, जो हिमालय के दक्षिणी ओर का विस्तार हैं, खैबर और गोमल दर्रों से गुज़रती हैं। सुलेमान पर्वतमालाएँ दक्षिण की ओर बलूचिस्तान में किरथार पर्वत मालाओं से जुड़ जाती हैं, जिन्हें बोलन दर्रे से होकर पार किया जा सकता है।

स्रोत – *हमारे अतीत-1*, एन.सी.ई.आर.टी., पृ. 2

भारत का इतिहास उन लोगों का दिलचस्प विवरण है, जो समय-समय पर यहाँ आए। वे अंततः यहाँ बस गए और उन्होंने भारत को अपना घर बना लिया। इन जन-समुदायों के यूनानी, साइथियन, हूण, अरब, तुर्की और फ़ारस के लोगों ने संस्कृति के विकास में योगदान दिया, जिसमें कला, वास्तुकला, साहित्य, वेश-भूषा, खान-पान, संगीत, नृत्य, चित्रकला आदि शामिल हैं। समय के साथ उन्होंने तत्कालीन संस्कृति को प्रभावित किया और उन पर भी यहाँ की संस्कृति का प्रभाव पड़ा। इससे एक नयी मिली-जुली संस्कृति का विकास हुआ।

ऐसे अनेक कारण थे, जिनकी वजह से लोग इस महाद्वीप की ओर आकर्षित हुए। यह एक ज्ञात तथ्य है कि प्राचीन काल में भी लोग इस उपमहाद्वीप के एक भाग से दूसरे में यात्रा करते थे। कभी-कभी हिमालय पर्वतमाला, अन्य पर्वतों व पहाड़ियों, नदियों, रेगिस्तानों और समुद्रों के कारण ये यात्राएँ खतरनाक और दुर्गम भले ही हो जाती थीं, लेकिन असंभव नहीं। लोग अनेक कारणों से यात्रा करते थे। पुरुष, महिलाएँ और बच्चे या तो जीविका की तलाश में अथवा बाढ़ या सूखे जैसी प्राकृतिक विपदाओं से बचने के लिए यात्रा करते थे। कभी-कभी सेनाएँ अन्य राज्यों पर विजय पाने के लिए

भी ऐसा प्रयास करती थीं। व्यापार भी एक अन्य कारण था, जिसकी वजह से लोग यात्रा करते थे। अक्सर व्यापारी कारवाँ बनाकर या जहाज़ों से यात्रा करते थे और मूल्यवान वस्तुएँ एक से दूसरे स्थान पर ले जाते थे। कुछ लोग संभवत: रोमांच की भावना से साहसिक यात्रा करते थे। आध्यात्मिक और शैक्षिक ज़रूरतों ने भी लोगों को इस उपमहाद्वीप में आने के लिए प्रेरित किया।

लोग किस प्रकार भारत आए थे?

लोग स्थल मार्ग और समुद्री रास्तों से हमारे देश में आए थे। ईरान, अफ़गानिस्तान और मध्य एशिया से लोग पहाड़ी दर्रों से आक्रमणकारियों, व्यापारियों, यात्रियों और प्रवासियों के रूप में आए थे। पहाड़ी दर्रों ने लोगों का आवागमन सुगम बना दिया और बाद में इसी मार्ग से भारत, मध्य एशिया और पश्चिम एशिया के बीच व्यापार और सांस्कृतिक संपर्कों को बढ़ावा मिला। पहले अरबी और बाद में पुर्तगाली, डच तथा अंग्रेज़ समुद्री मार्गों से भारत आए।

भारत के इतिहास के बारे में बाहर से यहाँ आनेवाले यात्रियों के विवरणों से जानकारी प्राप्त करना

जो लोग भारत आए उन्होंने भारत, इसके लोगों, समाज, संस्कृति और परंपराओं के विषय में लिखा। उनके विवरणों में भारत की कुछ प्रमुख ऐतिहासिक घटनाओं का उल्लेख मिलता है, जैसे यूनानी स्रोतों के आधार पर हमें यूनानी शासक सिकंदर, उसके आक्रमण और उससे संबंधित अन्य विषयों के बारे में पता चलता है। चंद्रगुप्त के शासन काल में भारत में यूनान के राजदूत मेगस्थिनीज़ ने *इंडिका* नामक एक पुस्तक लिखी थी, जिसके कुछ अंश आज भी

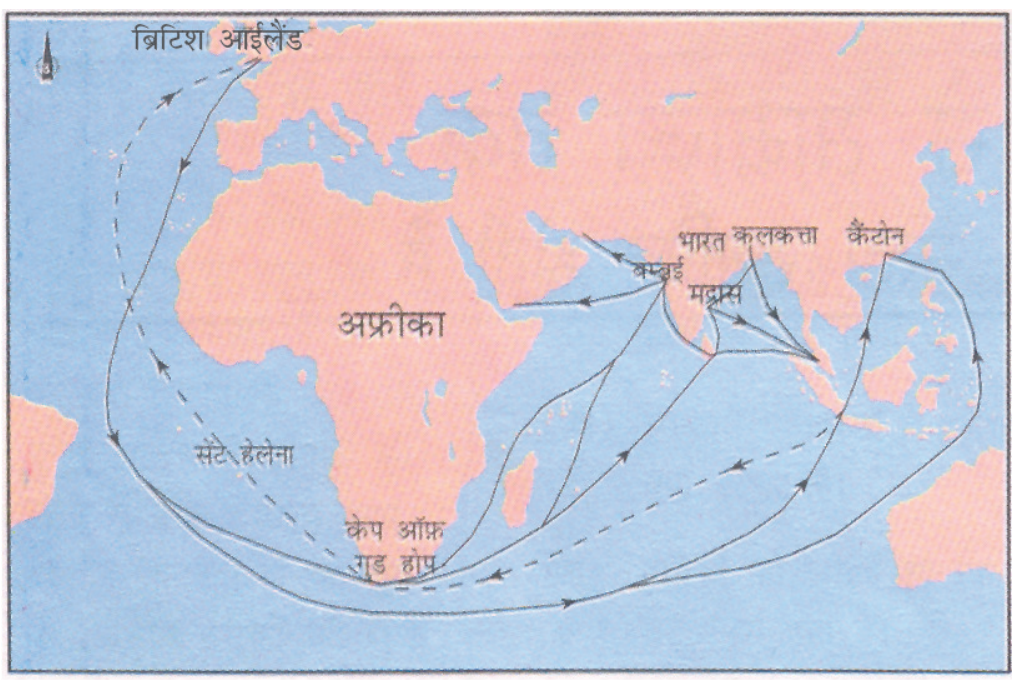

स्रोत – *हमारे अतीत–1*, एन.सी.ई.आर.टी., पृ. 10

सुरक्षित हैं और जिनका अनेक लेखक उदाहरण देते हैं। इस पुस्तक में मौर्यकालीन प्रशासन, सामाजिक वर्गों और लोगों के आर्थिक कार्यकलापों का विस्तृत विवरण मिलता है। मेगस्थिनीज़ के विवरण के साथ ही अन्य साहित्यिक स्रोतों, जैसे कौटिल्य के *अर्थशास्त्र*, विशाखदत्त के *मुद्राराक्षस* नाटक तथा जैन और बौद्ध धर्म की पुस्तकों में भी मौर्यकालीन शासकों और शासक वर्गों का विस्तृत विवरण मिलता है।

कुछ यूनानी और रोमन विवरणों से भी भारतीय पत्तनों के अस्तित्व और भारत तथा रोमन साम्राज्य के बीच (ईसा की पहली और दूसरी शताब्दी) व्यापार की वस्तुओं के बारे में पता चलता है। चीन से भारत आए यात्रियों के विवरणों में भी हमारे समाज, राजव्यवस्था और अर्थव्यवस्था की दिलचस्प जानकारी मिलती है। दो विख्यात चीनी यात्री, जो भारत आए वे फ़ा-शिएन और श्वैन त्सांग थे। ये दोनों बौद्ध थे व बौद्ध धर्म स्थलों की यात्रा करने और बौद्ध धर्म के अध्ययन के लिए भारत आए थे। फ़ा-शिएन पाँचवी शताब्दी के आरंभ में आए थे, जबकि श्वैन त्सांग सातवीं शताब्दी की शुरुआत में। फ़ा-शिएन ने गुप्त काल के भारत की सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक स्थिति का वर्णन किया, जबकि श्वैन त्सांग ने राजा हर्ष के काल में लोगों के जीवन और स्थिति का वर्णन किया है।

मुगल काल में अनेक यूरोपीय व्यापारी और यात्री भारत आए। उनमें से कुछ ने किसानों सहित आम लोगों की जीवन-स्थितियों का उल्लेख किया। राल्फ़ फ़िच, जो 16वीं शताब्दी के अंत में भारत आए थे, उन्होंने बताया कि बनारस (उत्तर प्रदेश) के लोग बहुत कम कपड़े पहनते थे। यात्री डी लेइट ने उल्लेख किया कि लोगों के पास पहनने के लिए पर्याप्त कपड़े नहीं थे। उन दोनों ने लिखा है कि लोगों का रहन-सहन सादा लेकिन कठिन था। आम लोग प्रायः चावल, मोटे अनाज और दालें खाते थे। बंगाल और तटीय क्षेत्रों में इनके स्थान पर मछली और दक्षिणी भारत में माँस खाया जाता था। देश के उत्तरी भाग में लोग सामान्यतः गेहूँ, दालें और सब्ज़ियाँ खाते थे।

देश में विभिन्न कालों में बाहर से आए लोगों की कला और वास्तुकला ने भी हमारी विविधतापूर्ण संस्कृति पर अपनी छाप छोड़ी।

मुगल काल में यहाँ जिस संस्कृति का उदय हुआ, वह तुर्क-ईरानी और भारतीय संस्कृति का मिश्रण थी। मुगलों ने किले, महल, विशाल प्रवेश द्वार, सार्वजनिक इमारतें, मस्जिदें और बावड़ियाँ (जलाशय और कुएँ) बनवाईं। इनमें से जो खूबसूरत बाग आज भी मौजूद हैं, उनमें कश्मीर का निशात बाग, लाहौर का शालीमार बाग और पंजाब का पिंजौर बाग हैं। ये बाग आज भी पर्यटकों में काफ़ी लोकप्रिय हैं। ये बाग-बगीचे सभी समुदायों के लोगों के लिए शांति के स्थल थे।

वास्तुकला के क्षेत्र में तुर्क और अफ़गानी लोग अपने साथ फ़ारसी और मध्य एशिया की शैलियाँ भी लाए, जो समय के साथ भारतीय वास्तुकला की शैलियों में मिल-जुल गईं। सल्तनत और मुगल काल की इमारतों में गुंबदों और मेहराबों का प्रयोग हुआ है।

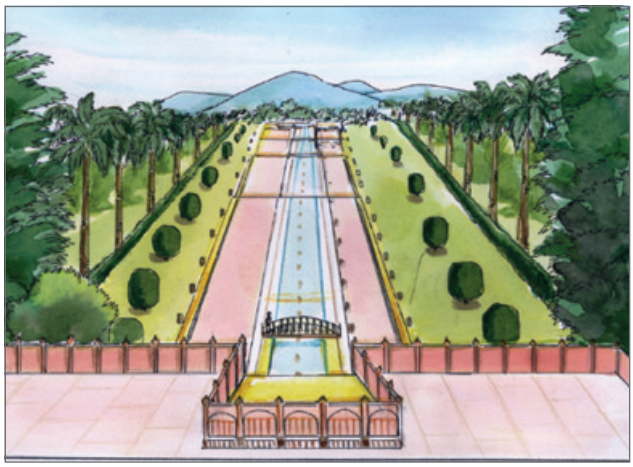

निशात बाग उर्दू के शब्द हैं। इनका मतलब है खुशी का उद्यान। यह बाग डल झील के तट पर स्थित है। यह कश्मीर में दूसरा सबसे बड़ मुगल उद्यान है।

पिंजौर उद्यान पिंजौर गाँव में है, जो चंडीगढ़ में कालका-शिमला रोड से 22 कि.मी. पर है। यह उद्यान औरंगज़ेब के पालक भाई नवाब फ़िदाल खान द्वारा बनवाया गया था।

ये दोनों शैलियाँ गणित और अभियांत्रिकी कौशलों के पूर्ण ज्ञान पर आधारित थीं। इनका उपयोग मस्जिदों, महलों, शहरों और निजी भवनों के निर्माण में होता था। दूसरी संरचना, जिसको अक्सर निर्मित किया जाता था, लंबे पतले बुर्ज या मीनारें थीं। इन भवनों की सजावट काफ़ी हद तक भारतीय थी। सल्तनत और मुगल काल में वास्तुकला की भारतीयता इसलिए भी मौजूद थी क्योंकि विभिन्न भवनों के निर्माण में लगे, अधिकांश शिल्पकार मुख्य रूप से भारतीय मूल के होते थे। भारतीय संगतराशों (पत्थर की कटाई करने वालों) के कौशल का इसके लिए पूरी तरह से उपयोग किया गया था। विभिन्न भवनों की सजावट में तुर्क ज्यामितीय और फूलदार डिज़ाइनों का प्रयोग करते थे। उनमें कुरान की आयतें लिखे शिलालेख भी शामिल थे। अरबी लिपि स्वयं एक कला-वस्तु बन गई थी। मूल भारतीय डिज़ाइन में मुख्यतः घंटी और कमल के डिज़ाइन होते थे।

संगीत भी समृद्ध हुआ। संगीत की हिंदुस्तानी शैली पर फ़ारसी और अरबी शैली का प्रभाव पड़ा। वाद्य यंत्रों में सितार, सारंगी और तबला लोगों में अधिक प्रचलित हो चले थे।

भाषा और साहित्य एक अन्य क्षेत्र था, जो विभिन्न कालों में आए लोगों से प्रभावित हुआ। सल्तनत और मुगल काल में देश के अधिकांश भागों में राजदरबारों की भाषा फ़ारसी थी। अनेक क्षेत्रीय भाषाएँ फ़ारसी से प्रभावित हुईं। बहुत सी क्षेत्रीय भाषाओं की शब्दावलियों में फ़ारसी शब्दों का सामान्यतः प्रयोग

गुंबद और मेहराब

गुंबद और मेहराब पहले भी थे लेकिन इनका व्यापक स्तर पर निर्माण नहीं किया जाता था। यही नहीं, मेहराब बनाने के सही वैज्ञानिक तरीकों का उपयोग विरले ही किया गया था।

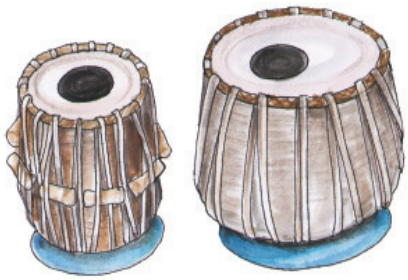

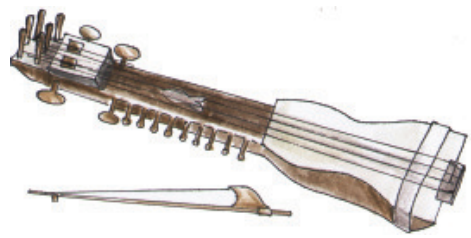

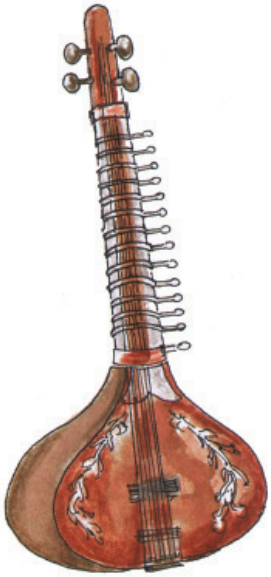

किया जाता था। फ़ारसी और हिंदी के मिश्रण से एक नयी भाषा उर्दू का विकास हुआ। उर्दू का व्याकरण हिंदी के व्याकरण जैसा ही था, लेकिन शब्द फ़ारसी-तुर्की और हिंदी भाषा के होते थे। दक्षिणी भारत में बोली जाने वाली उर्दू, तेलुगू और मराठी से प्रभावित थी। भारत के पश्चिमी तट के प्रदेशों में अरबी का उपयोग पश्चिम एशिया के व्यापारी करते थे और इसने स्थानीय भाषा को भी काफ़ी प्रभावित कर दिया। कुछ प्रसिद्ध संस्कृत रचनाएँ *पुराण*, *रामायण*, *महाभारत* आदि क्षेत्रीय भाषाओं में उपलब्ध थीं और फिर इनका क्रमशः अरबी और फ़ारसी में भी अनुवाद हो गया था। कुछ कविताएँ और नाटक क्षेत्रीय भाषाओं तथा अरबी और फ़ारसी में भी लिखे गए थे। इनमें श्रीनाथ का *हरविलास* और मलिक मुहम्मद जायसी का *पद्मावत* काफ़ी लोकप्रिय हो गए थे। अमीर खुसरो

अमीर खुसरो के बारे में (1253-1325)

अमीर खुसरो को भारतीय होने पर गर्व था। वे कहते थे कि मैं दो कारणों से भारत की प्रशंसा करता हूँ। एक तो इसलिए क्योंकि भारत मेरा जन्मस्थान और हमारा देश है। देशप्रेम एक महत्त्वपूर्ण दायित्व है। हिंदुस्तान स्वर्ग के समान है। इसकी जलवायु खुरासान से बेहतर है। यह वर्षभर हराभरा और फूलों से युक्त रहता है।

खुसरो का भारत प्रेम दिखाता है कि तुर्की शासक वर्ग विदेशी शासक वर्ग की तरह व्यवहार करने को तैयार नहीं था और भारतीय मूल की और भारत से बाहर की संस्कृतियों के बीच मेल के लिए ज़मीन तैयार हो गई थी। खुसरो ने हिंदी सहित (जिसे वे हिंदवी कहते थे) भारतीय भाषाओं की प्रशंसा की है। उनके कुछ यहाँ-वहाँ बिखरे हिंदी छंद मिले हैं, हालाँकि जिस हिंदी रचना *खालिक बारी* को अक्सर खुसरो की रचना कहा जाता है, उसके बारे में पूरी संभावना है कि वह उसी नाम के बाद के कवि की रचना है। वे संगीतकार भी थे और उन्होंने प्रसिद्ध सूफ़ी संत निज़ामुद्दीन औलिया द्वारा आयोजित धार्मिक संगीत सभाओं (समा) में भाग लिया था। उन्होंने चिश्ती सभा में कौल (अरबी शब्द, जिसका अर्थ है 'कथन') की शुरुआत करके एक विशिष्ट शैली दी, जो कि कव्वाली की शुरुआत या समापन पर गाया जाने वाला छंद था। इसके बाद फ़ारसी, हिंदवी या उर्दू भाषा में सूफ़ी कविता पढ़ी जाती थी। इसे कव्वालों द्वारा (जो इन गानों को गाते थे) गाया जाता था। आज कव्वाली पूरे उपमहाद्वीप में सभी मुस्लिम दरगाहों पर गाई जाती है।

अपनी कविताएँ फ़ारसी में लिखते थे, जिनमें उनके भारत प्रेम और भारतीय होने पर गर्व करने की झलक मिलती है। इस प्रकार भाषा और साहित्य उन लोगों द्वारा प्रभावित हुए थे जो बाहर से यहाँ आए और उन्होंने इस उपमहाद्वीप को अपना घर बना लिया।

जहाँ तक **भारतीय भोजन** का संबंध है इसके लिए मध्यकालीन अवधि विशेषत: महत्त्वपूर्ण थी। मध्य एशियाई लोगों, फ़ारसियों और तुर्कों के आने से भारतीय व्यंजनों पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। पश्चिम एशिया के मुसलमान 12वीं शताब्दी में मुगलई व्यंजनों को भारत लाए थे, जब मुगल शासकों ने भारत के बड़े भाग को जीत लिया था। मुगल सम्राटों के लिए मेवों और गिरियों से अनेक प्रकार के व्यंजन बनाए जाते थे। मुगलों के बढ़िया मसालेदार स्वादिष्ट सुगंधयुक्त व्यंजन, जिनमें अनेक विदेशी मसाले, मेवे और गिरियाँ, सुगंध, दूध और मलाई का इस्तेमाल होता था, आज भी भारतीय भोजन का महत्त्वपूर्ण हिस्सा बने हुए हैं। काली मिर्च, दालचीनी, जायफल, लौंग और अदरक जैसे मसालों का उपयोग मुगलई व्यंजनों में किया जाता था। बिरयानी, कोरमा, पुलाव, भुना माँस और कबाब आदि आज भी प्रचलित हैं। जब बाबर ने भारत पर हमला किया तो वह मध्य एशिया से अपने खानपान की आदतें, जैसे भुना माँस तथा फल एवं गिरियों को भी लाया। हुमायूँ ने चावल के पुलाव और माँस के दमपुख्त (स्ट्यू) जैसी नयी किस्में शुरू कीं। बंद बरतन में 'दम' शैली से चीज़ें पकाना काफ़ी हद तक मुगलई पाककला से संबद्ध है।

आश्रम/धर्मशाला—यात्रियों के रहने के निवास-स्थान, जिन्हें विशेषरूप से किसी धार्मिक संगठन या समूह द्वारा चलाया जाता है।

सूफ़ी संत

सूफ़ी संतों का उदय इस्लाम के बहुत शुरुआती चरण में ही हो गया था। इनमें से अधिकांश लोग गहरी आस्था वाले लोग थे और पूर्णत: सादा जीवन बिताते थे। कुछ आरंभिक महिला रहस्यवादी सूफ़ी संतों जैसे राबिया और मंसूर बिन हल्लाज ने ईश्वर और आत्मा के बीच बंधन के रूप में प्रेम पर बहुत बल दिया था। शिक्षक या पीर और उनके शिष्य या मुरीद के बीच संबंध सूफ़ी तंत्र का प्रमुख अंग था। हर पीर अपने काम को जारी रखने के लिए एक उत्तराधिकारी या वली को नामित करता था। सूफ़ी संत आम जनता के बीच बहुत लोकप्रिय थे, क्योंकि उन्होंने अपने कथनों-उपदेशों को गेय पदों के रूप में प्रस्तुत किया था, जिसे वे कव्वाली कहते थे। इन गेय पदों में आत्मा की ईश्वर से निकटता पर बल दिया जाता था। बहुधा इसके लिए वे हिंदी के छंदों का प्रयोग करते थे। निज़ामुद्दीन औलिया ने तो योग की श्वास-क्रियाओं को भी इतनी अधिक पूर्णता से अपना लिया था कि आम लोग उन्हें सिद्ध या पूर्ण पुरुष कहते थे। सूफ़ियों का संगठन और उनकी कुछ क्रियाएँ जैसे तप, उपवास और साँस रोकना आदि को प्राय: बौद्ध धर्म और हिंदू योग के प्रभाव के रूप माना जाता है।

खानक़ाह—एक विशाल भवन जिसमें हर आगंतुक और उसमें रहने वालों के लिए अलग- अलग आवास की व्यवस्था होती थी।

ग्यारहवीं शताब्दी में सूफ़ी मत ने भारतीय समाज को प्रभावित किया। सूफ़ी लोग धर्म के बाहरी आडंबरों को अस्वीकार करते हुए ईश्वर के प्रति प्रेम और भक्ति तथा सभी मनुष्यों के प्रति दया भाव रखने पर बल देते थे।

जाने कितने ही देशों से,
भारत आए लोग अनेक,
रंग, रूप, वेश, भाषा,
न थी जिनकी एक।

कुछ लेने धन आए थे तो,
कुछ करने आए व्यापार,
विविधता भरी सभ्यता का,
फिर यही बने आधार।

कौन है हममें परदेसी
और कौन है भारतवासी,
नहीं जान सकता यह कोई,
हममें बसी एकता ऐसी।

खेलकूद के क्षेत्र में कुछ खेल जो प्रचलित हुए और आज भी खेले जाते हैं, उनमें शतरंज, चौपड़, नार्ड (फ़ारसी बालझड़) और ताश हैं। अमीर खुसरो और मलिक मुहम्मद जायसी ने अनेक अवसरों पर शतरंज के खेल का उल्लेख किया है, जो लोगों में काफ़ी प्रचलित था। शतरंज का एक अन्य प्रकार जिसे शतरंजई कामिल या चतुष्टक शतरंज कहते थे, वह भी उस समय खेला जाता था। शासक वर्ग के लोग पोलो के शौकीन थे और घुड़दौड़ एक प्रचलित मैदान में खेला जाने वाला खेल था। इस खेल की उत्पत्ति ही फ़ारस में हुई थी। ऐतिहासिक अभिलेखों में यह कहा गया है कि कुतुब-उद्दीन ऐबक लाहौर में पोलो खेलते समय एक दुर्घटना में मारा गया था। तुर्क लोग पोलो के बहुत शौकीन थे। सल्तनत और मुगल काल के राजपूत शासक पोलो खेलने में माहिर थे।

दूसरा प्रमुख विकास जिसने समाज के सभी वर्गों के जीवन और दशा को प्रभावित किया, 11वीं शताब्दी से सूफ़ीमत का प्रसार था। इस शताब्दी में बड़ी संख्या में सूफ़ी मध्य एशिया से आए और हिंदुस्तान में बस गए। यह प्रक्रिया दिल्ली सल्तनत की स्थापना के साथ और सशक्त हो गई।

चिश्ती सिलसिला सबसे अधिक प्रभावशाली संत परंपरा थी। इसमें अजमेर के ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती, दिल्ली के कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी, दिल्ली के ख्वाजा निज़ामुद्दीन औलिया और गुलबर्ग के बंदानवाज़ गीसूदराज़ आदि थे।

सूफ़ी मुसलमान रहस्यवादी थे। वे प्रेम, ईश्वर में आस्था और अपने साथियों के प्रति करुणा पर ज़ोर देते थे। भक्ति-संतों की भाँति सूफ़ी भी विस्तृत रीतिरिवाजों को नकारते हुए प्रेम को ईश्वर से मिलन का माध्यम मानते थे। सूफ़ी अपनी सभाएँ खानकाहों (धर्मशालाओं) में करते थे। सभी प्रकार के श्रद्धालु, जिसमें राजकुल, अभिजात वर्ग और आमजन आदि शामिल थे, वहाँ जाया करते थे। आज भी लोग संतों का आशीर्वाद लेने और कव्वाली समारोहों में भाग लेने के लिए दरगाहों में जाते हैं।

लोग मानते थे कि सूफ़ी संतों के पास चमत्कारी शक्तियाँ होती हैं, जो रोगों, कष्टों और परेशानियों से उन्हें निजात (छुटकारा) दिला सकती हैं। सूफ़ी संतों के मकबरे या दरगाह तीर्थ-स्थल बन गए, जहाँ विभिन्न समुदायों के हज़ारों व्यक्ति आने लगे। आज भी बड़ी संख्या में विभिन्न धर्मों और समुदायों के लोग सूफ़ियों की दरगाहों (जैसे अजमेर में मोइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह और दिल्ली मे निज़ामुद्दीन औलिया की दरगाह) में जाते हैं।

आओ याद करें

1. विभिन्न कालों में भारत आए विदेशी यात्रियों के नाम बताइए।
2. वे यहाँ क्यों आए थे?
3. उन्होंने भारत के विगत काल में यहाँ के लोगों, जीवन और उनकी दशा के विषय में क्या लिखा?

आओ चर्चा करें

4. आप के.जी.बी.वी. में कराटे, संगीत, नृत्य आदि अनेक क्रियाकलाप कर रही हैं। आपके विचार से ये सब भारत के विभिन्न राज्यों अथवा विदेशों की संस्कृतियों से किस तरह प्रभावित हैं?
5. क्या आपके शहर या गाँव में कोई खानक़ाह या दरगाह है, पता लगाइए कि इनका निर्माण कब हुआ था और वहाँ किस प्रकार के कार्यकलाप होते हैं?

आओ करके देखें

6. अपने गाँव की चित्रकारी और शिल्पों के चित्र एकत्रित कीजिए और उन्हें स्क्रेप बुक में लगाइए।
7. स्मारकों का एक चित्रसंग्रह (एलबम) बनाइए और उनके बारे में संक्षिप्त विवरण लिखिए।

दरगाह–(एक फ़ारसी शब्द जिसका अर्थ है दरबार) किसी शेख (धर्मगुरु) का निधन होने पर मकबरे में उसका वह धर्मस्थल, जहाँ उसके अनुयायी उसके प्रति श्रद्धा भक्ति प्रकट करने के लिए जमा होते हों।

6

भारत के प्रमुख पुरुषों और महिलाओं के योगदान

लाए जो बदलाव

अंग्रेज़ यहाँ पर आए तो थे
करने को व्यापार,
शासन कमज़ोर देख उन्होंने
उठा लिए हथियार,
कच्चा माल यहाँ का लूटा
निर्मित माल यहीं फिर बेचा
उद्योग नष्ट यहाँ का कर के
फैलाया अपना व्यापार।

पर यह सब कब तक चलता,
भारत देश कभी तो जगता,
भारत देश जगाने को
और अत्याचार मिटाने को,
धोखेबाज़ व्यापारी को
यहाँ से मार भगाने को,
सोते भारत के मानस को
अब झकझोर जगाने को,
अनेक नर-नारियों ने
किया था यह आह्वान...
'बदलेगा वक्त
न हो उदास
मिट जाएगी
तेरी भूख, गरीबी, अशिक्षा
रुकेगा उनका दमन
छू पाओगे तुम भी
सफलताओं के ऊँचे आकाश
जागो उठो और
करो प्रयास।'

—इन्दू कुमार

इस पाठ में हम समाज सुधार एवं स्वतंत्रता संग्राम से जुड़ी कुछ महिलाओं तथा पुरुषों के बारे में जानकारी देने का प्रयास करेंगे। इनका जीवन हम सभी के लिए प्रेरणा स्रोत रहा है। इन लोगों ने समाज की कुप्रथाओं को मिटाने तथा स्त्री शिक्षा को बढ़ावा देने के भरसक प्रयास किए। इनमें कुछ ने आज़ादी की लड़ाई में अपना जीवन समर्पित किया। बच्चो, क्या आपके आसपास या गाँव में ऐसे लोग आज भी मौजूद हैं, जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया या जो आज भी कुप्रथाओं से लड़ रहे हैं और स्त्री-शिक्षा को बढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं? उनके जीवन के बारे में आप भी लेख या कविता आदि लिख सकते हैं।

यह अध्याय भारत के उन पुरुषों और महिलाओं के विवरण पर आधारित है, जो विभिन्न क्षेत्रों में अपने योगदान के लिए जाने जाते हैं। वे समाज के विभिन्न वर्गों के थे और महिलाओं और समाज के उन वर्गों के लोगों में शिक्षा को बढ़ावा देने में अग्रणी रहे, जिन्हें शेष समाज अपने बराबर का नहीं मानता था या जो समाज के निचले तबके के थे। भले ही इन महान पुरुषों व महिलाओं की संख्या कम है, लेकिन उनका जीवन प्रयासों, संघर्षों और उपलब्धियों का मेल था।

भारत के कुछ प्रमुख पुरुषों और महिलाओं ने समाज के सभी वर्गों के लोगों के उत्थान के लिए अथक प्रयास किए। शिक्षा के क्षेत्र में और जाति, लिंग व धर्म से संबंधित बाधाओं को दूर करने में उनका योगदान पूर्णत: स्पष्ट है। इस अध्याय में उन लोगों के विषय में भी बताया गया है, जिन्होंने ब्रितानी साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष किया।

इस अध्याय को पढ़ने के बाद आप अपने गाँव, ज़िले और राज्य में ऐसे पुरुषों, स्त्रियों और संगठनों की पहचान कर सकते हैं, जो शिक्षा के प्रसार, समाज सुधार और समाज के समग्र विकास आदि के लिए कार्यरत हैं। आप उनके कार्यकलापों के बारे में पता भी कर सकते हैं। संभवत: उनके द्वारा अपनाए गए कुछ तरीकों को अपनाकर आप भी सामाजिक बुराइयों को दूर करने और अपने समुदाय/समाज के दुर्बल

वर्गों की बालिकाओं में शिक्षा को बढ़ावा देने में योगदान दे सकते हैं। आप भी उन अनुचित सामाजिक और सांस्कृतिक प्रथाओं को समाप्त करने के लिए ज़रूरी कदम उठा सकते हैं, जो बालिकाओं, महिलाओं और समाज के दुर्बल वर्गों तक शिक्षा को पहुँचने से रोकती हैं।

मैडम भीकाजी कामा (1861-1936)

मैडम भीकाजी कामा

मैडम कामा का जन्म 24 सितंबर 1861 को एक समृद्ध पारसी परिवार में हुआ था। उनके पिता सोरबजी फ्रेमजी पटेल प्रसिद्ध व्यापारी थे और उनकी माता जीजी बाई एक अमीर प्रभावशाली घराने से थीं। भीकाजी ने अपनी शिक्षा एलिक्जैंड्रिया गर्ल्स स्कूल से अंग्रेज़ी परिवेश में (ऐसा परिवेश जो ब्रितानी तौर-तरीकों और जीवन-शैली से प्रभावित था) ग्रहण की थी। वे बचपन से ही विद्रोही और राष्ट्रवादी थीं। उनमें भाषाएँ सीखने की जन्मजात प्रवृत्ति थी और विभिन्न हल्कों और विभिन्न लोगों के बीच वे अपने देश की स्थिति के विषय में तर्क करने में दक्ष थीं।

उनके राष्ट्रवादी विचार, गतिविधियाँ और विद्रोही व्यवहार उनके माता-पिता के लिए चिंता और परेशानी के कारण थे। उनका ध्यान बँटाने और उन्हें राजनीतिक सक्रियता से दूर रखने के लिए उनके माता-पिता ने 1885 में उनका विवाह रुस्तम के.आर. कामा से कर दिया, जो अमीर और प्रभावशाली पारसी थे। वैचारिक दृष्टि से मैडम कामा और उनके पति एक दूसरे से पूर्णत: भिन्न थे। श्री कामा अंग्रेज़ों को बहुत पसंद करते थे, उनकी संस्कृति से प्रेम करते थे और सोचते थे कि उन्होंने भारत का बहुत भला किया है। मैडम कामा, जो अब पूर्णत: राष्ट्रवादी बन गई थीं, सदैव यह सोचती थीं कि अंग्रेज़ों ने भारत का शोषण किया है। इस प्रकार के वैचारिक मतभेदों के कारण उनका विवाह सफल नहीं रह पाया। मैडम कामा स्वयं को सामाजिक और राजनीतिक क्रियाकलापों में व्यस्त रखने लगीं। अक्तूबर 1896 में बॉम्बे प्रेज़िडेंसी में पहला अकाल पड़ा और उसके एकदम बाद वहाँ प्लेग का प्रकोप फैल गया। मैडम कामा उस स्वयंसेवी दल की अगुआ थीं, जो प्लेग-पीड़ितों की रक्षा का प्रयास कर रहा था। इसके फलस्वरूप वह स्वयं इस घातक रोग से पीड़ित हो गईं। उन्हें चमत्कारिक रूप से बचा तो लिया गया लेकिन रोग ने उनके स्वास्थ्य पर स्थायी रूप से प्रतिकूल प्रभाव डाल दिया।

1902 में उन्हें आराम और स्वास्थ्य-लाभ के लिए लंदन भेजा गया। मैडम कामा ने अपने शेष जीवन का अधिकांश हिस्सा विदेश में बिताया क्योंकि ब्रितानी सरकार ने भारत में उनके प्रवेश पर प्रतिबंध लगा दिया था। उसने भारत में उनकी संपत्ति को भी ज़ब्त कर लिया।

इसके बावजूद इनमें से कोई भी बाधा मैडम कामा को रोक नहीं पाई। उन्होंने इंग्लैंड में एक वयोवृद्ध महापुरुष दादा भाई नौरोजी के मार्गदर्शन में अपना राजनीतिक कार्य शुरू कर दिया। उन्हें 'क्रांति की जननी' (मदर ऑफ़ रिवोल्यूशन) कहा जाने

लगा। उन्होंने घोषणा कर दी 'आगे बढ़ो हम भारत के हैं। भारत भारतीयों का है।' वे भारत और विदेश स्थित क्रांतिकारियों की आर्थिक सहायता करती रहीं। अंग्रेज़ों को उनके कार्यकलाप नहीं भाए और उन्होंने उनकी हत्या की योजना बनाई। स्वयं को अंग्रेज़ों के षडयंत्र से बचाने के लिए, वे समुद्री जहाज़ से फ्रांस चली गईं। वे पेरिस में रहने लगीं, जहाँ उनका घर बाद में विश्व भर के क्रांतिकारियों का आश्रय-स्थल बन गया। कहा जाता है कि रूसी क्रांति के जनक लेनिन भी उनके घर आए थे और उन्होंने उनके साथ विचारों का आदान-प्रदान किया था।

मैडम कामा महिलाओं के हित के लिए भी संघर्ष करती थीं। मिस्र में काहिरा में 1900 में आयोजित राष्ट्रीय सम्मेलन में बोलते समय उन्होंने पूछा, ''मिस्र की आधी जनता कहाँ है? मुझे सिर्फ़ पुरुष दिखाई दे रहे हैं, जो देश के आधे भाग का ही प्रतिनिधित्व करते हैं।'' उन्होंने किसी भी राष्ट्र के निर्माण में महिलाओं की भूमिका पर ज़ोर दिया। मैडम कामा ने भारत की स्वतंत्रता के लिए प्रयास जारी रखे। अगस्त 1907 में, स्टुटगार्ट (जर्मनी) में द्वितीय अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी सम्मेलन हुआ। इसमें विभिन्न देशों के एक हज़ार से अधिक प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सम्मेलन के अंतिम दिन मैडम कामा ने मंच पर खड़े होकर सभी अंतर्राष्ट्रीय प्रतिनिधियों से सीधे पूछा कि क्या वे भारत की स्वतंत्रता के संग्राम के लिए अपना समर्थन देंगे। यह पहली बार था जब भारत की स्वतंत्रता का मुद्दा अंतर्राष्ट्रीय मंच पर उठाया गया था। अपनी बात खत्म करते-करते उन्होंने एक लपेटे हुए कपड़े को खोला और पलभर में ही यह झंडे में बदल गया, जिसे उन्होंने अपने दोनों हाथों से ऊपर उठा कर कहा, ''यह झंडा भारत की स्वतंत्रता का है। देखो, इसका जन्म हो चुका है। यह उन युवा भारतीयों के रक्त से पवित्र हो गया है, जिन्होंने अपने जीवन को बलिदान कर दिया। मैं आप सभी सज्जनों से अनुरोध करती हूँ कि खड़े होकर भारत की स्वतंत्रता के प्रतीक इस झंडे का अभिनंदन करें। इस झंडे के नाम पर मैं विश्वभर के स्वतंत्रता-प्रेमियों से इस झंडे के लिए पूरा समर्थन देने की अपील करती हूँ।'' यह पहली बार था कि किसी विदेशी भूमि पर भारतीय झंडा अंतर्राष्ट्रीय प्रतिनिधियों के बीच प्रदर्शित किया गया था। सन् 1931 में जब वे 70 वर्ष की थीं और गंभीर रूप से रोगग्रस्त थीं, तब उन्हें भारत लौटाने की अनुमति मिली। 13 अगस्त, 1936 को मुंबई में उनका निधन हो गया।

यू कियांग नंगबाह

यू कियांग नंगबाह

यह भारत के उत्तर-पूर्वी भाग में स्थित एक छोटे से राज्य मेघालय के एक जनजातीय स्वतंत्रता-सेनानी की कहानी है। मेघालय का अर्थ है 'बादलों (मेघों) का घर'। मेघालय की पहाड़ियाँ बहुत पुरानी हैं। मेघालय के पूर्वी भाग में जैन्तिया पहाड़ियाँ हैं। इन पहाड़ियों के निवासी जैन्तिया कहलाते हैं। इन

पहाड़ियों में जैन्तियापुर की राजधानी स्थित थी। राजा राजेंद्र सिंह जैन्तियापुर के राजा थे। लेकिन अंग्रेज़ों ने उनके साथ धोखा किया और उन्हें उनके राज्य से वंचित कर दिया। उनके मैदानी इलाकों को अंग्रेज़ों ने छीन लिया। उनके पास सिर्फ़ पहाड़ों पर ही शासन करने का विकल्प बचा। पहाड़ी क्षेत्रों में प्रशासन के लिए राजस्व एकत्रित होने की संभावना कम रहती थी। अत: राजा राजेंद्र सिंह ने राजसत्ता छोड़ दी। शासन का काम ग्राम प्रधान को सौंपा गया। ग्राम प्रधान 'डोलोई' या 'सरदार' कहलाते थे। यह प्रणाली 1835 से 1853 तक सुचारु रूप से चली, यद्यपि गुप्त रूप से लोगों में अंग्रेज़ों के प्रति आक्रोश था। फिर अंग्रेज़ों ने 1860 में पहाड़ी गाँवों में गृहकर लगा दिया। इसका पहाड़ी जनता द्वारा विरोध हुआ और कुछ ही महीनों में उन्होंने बगावत कर दी, लेकिन उनकी बगावत सफल नहीं रही क्योंकि वे संगठित नहीं हो पाए थे।

1860 के अंत तक अंग्रेज़ों ने आयकर भी लगा दिया। जनता को आशंका थी कि कहीं पान और सुपारी पर भी कर न लगा दिया जाए। इन करों के लगने से जैन्तिया जनजाति के लोगों में खलबली मच गई। 1862 में उन लोगों ने भयंकर बगावत कर दी। इस बगावत का अगुवा व प्रेरक एक युवा यू कियांग नंगबाह था। इस पहले विद्रोह में उन्होंने अपनी पहचान गुप्त रखी और गिरफ़्तारी से बचे। दूसरी बगावत की लहर इतनी उग्र थी, कि अंग्रेज़ों ने उसे दबाने के लिए सात रेजीमेंटें और सैनिक टुकड़ियाँ कार्रवाई के लिए भेजीं। जोवाई, जहाँ लगभग तीन सप्ताह तक विद्रोही घेरा डाले हुए थे, उस पर अंग्रेज़ों ने पुन: कब्ज़ा कर लिया लेकिन उसमें बड़ी संख्या में लोग मारे गए। यू कियांग नंगबाह अत्यधिक बुद्धिमान थे और उनकी संगठन दक्षता अद्‌भुत थी। विद्रोह को अत्यधिक सफल बनाने के लिए उन्होंने अंग्रेज़ों को शक का मौका न देते हुए सभी 'डोलोई' और 'सरदारों' से संपर्क किया। वे अंग्रेज़ गुप्तचर सेवा को चकमा देने में सफल रहे। उन्हें उनकी गतिविधियों और कार्यकलापों का कोई पता नहीं चला। फिर भी अंग्रेज़ों की बड़ी ताकत के कारण वे सफल नहीं हो पाए। इस लड़ाई में सैकड़ों जैन्तिया मारे गए और यू कियांग नंगबाह को बंदी बना लिया गया। 30 दिसंबर, 1862 को उन्हें सार्वजनिक रूप से फाँसी दे दी गई। उन्हें जब फाँसी के तख्ते पर ले जाया जा रहा था तो उन्होंने बुलंद और साफ़ आवाज़ में कहा, ''यदि फाँसी के फंदे पर लटकने के बाद मेरा चेहरा पूर्व दिशा की तरफ़ हो जाए तो हम सौ वर्ष में फिर से आज़ाद हो जाएँगे, लेकिन यदि यह पश्चिम की ओर हो जाएगा तो हम सदा गुलाम रहेंगे।'' उनके शब्द कितने भविष्यसूचक थे और उनकी इच्छाशक्ति कितनी प्रबल थी कि उनका चेहरा पूर्व दिशा की ओर घूम गया था और भारत अगले सौ वर्ष से पहले ही स्वतंत्र हो गया था!

सावित्रीबाई फुले (1831–1897)

सावित्रीबाई फुले की जीवनी महाराष्ट्र की एक प्रमुख समाज सुधारक की जीवनी है, जिन्होंने समाज के सबसे अधिक वंचित वर्गों की महिलाओं के उत्थान के लिए काम किया। उनका जन्म 3 जनवरी 1831 को ज़िला सतारा के नाईगाँव नामक गाँव में हुआ। तत्कालीन सामान्य प्रथा के अनुसार उनके पिता ने नौ वर्ष की आयु में ज्योतिबा फुले से

सावित्रीबाई फुले

उनका विवाह कर दिया। सावित्रीबाई और ज्योतिबा फुले दोनों ही बाद में महाराष्ट्र के प्रमुख समाज सुधारक बन गए। पति और पत्नी के दल ने अपना पूरा जीवन लड़कियों की शिक्षा को बढ़ावा देने और शैशवावस्था से वयस्क होने तक लड़कियों के पूरे जीवन चक्र को कुप्रभावित करने वाली कुछ परंपरागत प्रथाओं को खत्म करने में लगा दिया।

उनके पति ने उन्हें पढ़ाया और बाद में उन्होंने 1841 में नॉर्मल स्कूल में दाखिला ले लिया। उन्होंने नॉर्मल स्कूल से 1846–47 में तीसरे और चौथे वर्ष की परीक्षाएँ अच्छे अंक लेकर पास कीं। अपनी औपचारिक शिक्षा पूरी करने के बाद उन्होंने और उनके पति ने पुणे में 1848 में बालिकाओं के लिए एक स्कूल खोला और वे उसकी प्रधानाचार्या बन गईं। यह उत्साहजनक बात है कि वह युग जिसमें लड़कियों के माता-पिता और समाज उनकी शिक्षा को महत्त्वपूर्ण नहीं मानते थे, सावित्रीबाई फुले और उनके पति ने अभिभावकों को अपनी लड़कियों को स्कूल भेजने के लिए प्रोत्साहित किया। शुरुआत में नौ लड़कियों ने स्कूल में अपना नामांकन करवाया था। उनकी सामाजिक पृष्ठभूमि अलग-अलग थी।

वंचित वर्ग की बालिकाओं के लिए उनके उत्कृष्ट शैक्षिक कार्य को समाज द्वारा स्वीकार नहीं किया गया। अक्सर लोग उनका मज़ाक उड़ाते थे, उन पर टिप्पणियाँ करते थे। उन पर अंडे, गोबर, टमाटर और पत्थर फेंकते थे। इससे उनके दृढ़ निश्चय और आत्मविश्वास में कमी नहीं आई। उन्होंने अपना मिशन जारी रखा। उसी वर्ष यानी 1848 में ही उन्होंने अपने पति के सहयोग से लड़कियों के लिए पाँच और स्कूल खोले। उनके कार्य पर अंग्रेज़ सरकार का ध्यान गया और उन्होंने उनका और उनके पति का अभिनंदन किया और उनके काम की सराहना की।

शिक्षा के साथ-साथ उन्होंने और उनके पति ने विधवाओं से संबंधित कुछ कुरीतियों को समाप्त करने का भी प्रयास किया। एक कुरीति विधवाओं का सिर नियमित रूप से मुंडवाने की थी। सावित्रीबाई और ज्योतिबा ने नाइयों की हड़ताल कराई और उन्हें विधवाओं के सिर का मुंडन न करने के लिए राज़ी कर लिया। यह अपने तरीके की पहली हड़ताल थी। उन्होंने महिलाओं के लिए एक 'प्रसूति गृह' भी खोला जिसका नाम 'बालहत्या प्रतिबंधक गृह' रखा गया।

सावित्रीबाई और उनके पति मूर्तिपूजा और सभी प्रकार के कर्मकांडों के विरुद्ध थे। उन्होंने सत्य शोधक समाज की स्थापना की जिसका कार्य समाज के दुर्बल वर्गों का समग्र विकास था। अपने पति की मृत्यु के पश्चात उन्होंने इस समाज को चलाने का संपूर्ण दायित्व स्वीकार कर लिया।

उनके द्वारा किए गए अन्य सामाजिक कार्यों में अछूतों को अपने कुएँ से पानी भरने की अनुमति देना था। उन्होंने उन गरीब बच्चों के लिए शिविरों का आयोजन भी किया जो प्लेग से पीड़ित थे। ऐसा कहा जाता है कि महामारी के दौरान वे दो हज़ार बच्चों को रोज़ भोजन

कराती थीं। प्लेग से पीड़ित बच्चों की सेवा के दौरान वे स्वयं प्लेग से पीड़ित हो गईं और 10 मई 1897 को उनका निधन हो गया।

वे उत्तम कोटि की लेखिका भी थीं। उनकी दो प्रकाशित कविताएँ हैं, 1934 में प्रकाशित *काव्य फुले* और 1982 में प्रकाशित *बावन काशी सुबोध रत्नाकर*।

समाज के दुर्बल वर्गों के उत्थान के लिए किए गए उनके प्रयासों को महाराष्ट्र सरकार ने मान्यता दी। राज्य सरकार ने उनके नाम पर उन महिलाओं को पुरस्कृत करना शुरू किया है, जो सामाजिक सरोकारों के लिए काम कर रही हैं। 10 मार्च 1998 को भारतीय डाक विभाग द्वारा सावित्रीबाई के योगदानों की सराहना में एक डाक टिकट जारी किया गया है। सरकार द्वारा लड़कियों की शिक्षा को बढ़ावा देने वाली कुछ छात्रवृत्तियाँ भी सरकार ने उनके नाम से शुरू की हैं।

कस्तूरबा गांधी (1869–1944)

कस्तूरबा गांधी

कस्तूरबा गांधी, जिनको प्यार से सब 'बा' कहते हैं, का जन्म 11 अप्रैल 1869 को पोरबंदर के एक समृद्ध व्यवसायी गोकुलदास माखरजी के घर हुआ था। तेरह वर्ष की अल्पायु में ही उनका विवाह मोहनदास करमचंद गांधी के साथ हो गया। उन्हें उनके माता-पिता ने शिक्षा नहीं दिलवाई थी। विवाह के बाद उनके पति मोहनदास ने उन्हें पढ़ना-लिखना सिखाया। कस्तूरबा गांधी ने अन्याय के खिलाफ़ लड़ाई में और सभी प्रकार की सामाजिक कुरीतियों, जैसे छुआछूत आदि के विरुद्ध संघर्ष में अपने पति का साथ दिया।

जब 1893 से 1914 तक गांधीजी दक्षिण अफ्रीका में थे, तो बा ने डर्बन के निकट की फ़ीनिक्स बस्ती को सशक्त करने में अपने पति के कार्यों में सक्रिय योगदान दिया। दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की कार्य-स्थितियों को सुधारने के काम में सहायता करने के लिए उन्हें गिरफ़्तार कर लिया गया और तीन माह की कैद हो गई।

जब 1915 में गांधीजी भारत आए, तो चंपारन, बिहार के नील की खेती करने वाले श्रमिकों के सरोकारों के लिए आवाज़ उठाने में उन्होंने अपने पति का साथ दिया। जहाँ गांधीजी नील की खेती करने वाले मज़दूरों के लिए आवाज़ उठा रहे थे, वहीं कस्तूरबा गांधी उन किसानों की स्त्रियों, अनेक महिलाओं और बच्चों को स्वच्छता, अनुशासन, पढ़ना-लिखना सिखाती थीं। उन्होंने 1918 में, केरा, गुजरात में 'कर मत दो' अभियान में भी सक्रिय रूप से भाग लिया। इस अभियान में उन्होंने केरा की महिलाओं के सामने बहुत महत्त्वपूर्ण भाषण दिया, जिसमें उन्होंने उनसे अपने पतियों को समर्थन देने की बात कही और उन्हें अनुचित राजस्व अदा न करने के लिए प्रोत्साहित किया। उनके पति द्वारा शुरू किए गए पहले असहयोग आंदोलन में उनकी भागीदारी देखते

फ़ीनिक्स सेटलमेंट

दक्षिण अफ्रीका में फ़ीनिक्स सेटलमेंट गांधीजी द्वारा स्थापित किया गया था। यहीं पर गांधीजी ने पहली बार सत्याग्रह के रूप में जानी गई अहिंसात्मक विरोध की अपनी विशिष्ट तकनीक का इस्तेमाल किया।

घेराबंदी- लोगों को किसी इमारत या दुकान में जाने से रोकने के लिए किया जाने वाला विरोध प्रदर्शन।

ही बनती थी। गांधीजी के साथ वे गाँव-गाँव गईं और वहाँ उन्होंने महिलाओं से सूत कातने, खादी पहनने, सरकारी स्कूलों और कॉलेजों का बहिष्कार करने और छुआछूत को मिटाने की अपील की। उन्हें 1931 में और पुनः 1932 में विदेशी कपड़े और शराब बेचने वाली दुकानों पर धरना देने के लिए गिरफ़्तार कर लिया गया। 1935 में उन्हें पुनः स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने के लिए गिरफ़्तार कर लिया गया। फिर उन्हें 1942 में अपने पति की गिरफ़्तारी का विरोध करने के लिए आयोजित सभा को संबोधित करने के लिए जाते समय गिरफ़्तार कर लिया गया। स्वतंत्रता संग्राम में भागीदारी करने के लिए उन्हें अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

कस्तूरबा गांधी ने अपना पूरा जीवन समाज के सबसे अधिक अभावग्रस्त वर्गों के कल्याण के लिए समर्पित कर दिया। वे चिरकालिक ब्रॉन्काइटिस से पीड़ित हो गई थीं। भारत छोड़ो आंदोलन और गिरफ़्तारियों से उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। 22 फ़रवरी 1944 को गंभीर हृदयाघात से उनका निधन हो गया।

पंडिता रमाबाई सरस्वती (1858–1922)

पंडिता रमाबाई सरस्वती का जन्म 23 अप्रैल 1858 को पश्चिमी घाट के मंगलोर ज़िले के गंगामुल में हुआ था। उनके पिता अनंत शास्त्री बड़े विद्वान ब्राह्मण और महान समाज सुधारक थे। वे महिला शिक्षा के प्रबल समर्थक थे। जैसा कि 19 वीं शताब्दी में आम रिवाज था, उनका विवाह नौ वर्ष की बालिका से किया गया था। उन्होंने उसे शिक्षित करने का निर्णय लिया।

पंडिता रमाबाई सरस्वती

उन्होंने अपनी पत्नी को संस्कृत और धर्मशास्त्र पढ़ाए। उनकी पत्नी ने बाद में अपने बच्चों को, विशेष रूप से रमाबाई को शिक्षित किया। बहुत अल्प आयु में ही वे संस्कृत में पारंगत हो गईं। बारह वर्ष की आयु में उन्हें पुराणों के 18,000 श्लोक कंठाग्र याद हो गए थे। उन्हें शास्त्रों और भागवत का उत्तम ज्ञान था। धर्मग्रंथों के गहन ज्ञान के कारण कोलकाता के पंडितों ने उन्हें उच्चतम उपाधि यानी 'सरस्वती' की उपाधि प्रदान की।

पंडिता रमाबाई किसी प्रकार के जातिगत भेदभाव में यकीन नहीं करती थीं और उन्होंने एक बंगाली वकील बिपिन बिहारी मेधावी से विवाह किया। वे ब्राह्मसमाज के भी सदस्य थे, जो समाज सुधार करने के प्रति समर्पित था।

बाल विधवाओं की व्यथा से व्यथित होकर पंडिता रमाबाई और उनके पति ने उनके लिए एक स्कूल खोलने का निर्णय लिया। वे बहुत कम आयु में ही अपने पति को खो बैठीं। दो वर्ष बाद ही हैज़े से उनकी मृत्यु हो गई थी और वे अपने पीछे मनोरमा नाम की बेटी भी छोड़ गए। लेकिन पंडिता रमाबाई ने हिम्मत नहीं हारी। वे बाल विधवाओं, विशेष रूप से चितपावन ब्राह्मण समुदाय की बाल विधवाओं के सरोकारों के लिए आवाज़ उठाने को दृढ़संकल्प हो गईं। स्कूल खोलने के लिए उन्हें धन की आवश्यकता थी, जिसके लिए पंडिता रमाबाई सरस्वती ने देश में और देश के बाहर व्यापक रूप से यात्राएँ की। वे अमेरिका गईं और वहाँ उन्होंने विभिन्न सामाजिक और धार्मिक वर्गों के लोगों को अपनी

योजनाएँ बताईं। ये सभी लोग अमीर व्यवसायी थे। यहीं पर 28 मई 1887 को रमाबाई एसोसिएशन नामक छोटे दल का गठन हुआ। इस संस्था ने उन्हें 10 वर्ष तक वित्तीय सहायता देते रहने का वचन दिया।

धन उपलब्ध हो जाने पर उन्होंने मुंबई में एक आवासीय स्कूल खोला जिसका नाम उन्होंने 'शारदा सदन' रखा। यह महाराष्ट्र में विधवाओं के लिए पहला आश्रम था। ऐसा ही एक सदन सिर्फ़ बंगाल में था, जिसे श्री सेन द्वारा शुरू किया गया था।

सदन का मुख्य उद्देश्य युवा विधवाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाना था। अधिकांश विधवाओं को शिक्षिका, गृहरक्षिका, नर्स, दाई आदि के कामों के लिए प्रशिक्षित किया गया था, जिससे वे अपनी जीविका अर्जित कर सकें। सदन की पाठ्यचर्या में बालवाड़ी (किंडरगार्डन) शिक्षा पद्धति पर ज़ोर दिया गया। इसमें संस्कृत, अंग्रेज़ी, गुजराती और मराठी पढ़ाई जाती थी। भूगोल, खगोल विज्ञान, इतिहास, गणित, रसायन विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, प्राणि विज्ञान, शरीरक्रिया विज्ञान और स्वास्थ्य विज्ञान आदि विषय भी यहाँ पढ़ाए जाते थे। नैतिक शिक्षा, सदाचार और गृह प्रबंधन पर विशेष बल दिया जाता था।

यही नहीं, सदन ने अपनी छात्राओं को सिलाई, कशीदाकारी, बुनाई, चित्रकला, चीनी मिट्टी के पात्रों पर अलंकरण करना, मिट्टी के खिलौने बनाना, फ़ोटोग्राफी, काष्ठ उत्कीर्णन, बाँस से वस्तुएँ बनाना आदि में भी प्रशिक्षित किया। आनंदीबाई कर्वे इस सदन की पहली विद्यार्थी थीं। आनंदीबाई कर्वे ने अपनी आत्मकथा *माझे पुरान* लिखी, जिसमें बाल-विधवा के जीवन का मार्मिक वर्णन किया गया है। वे कहती थीं कि अगर लड़कियों को स्वतंत्रता और स्वस्थ परिवेश दिया जाए तो उनके व्यक्तित्व का पूर्ण विकास होता है और वे आत्मनिर्भर बन सकती हैं। सदन के कार्यकलापों को समुदाय का समर्थन प्राप्त था। धीरे-धीरे अविवाहित लड़कियों को भी दाखिला दिया जाने लगा। सदन की शुरुआत 1890 में 18 निवासियों से हुई थी और यह संख्या बढ़कर 64 हो गई थी।

पंडिता रमाबाई द्वारा शुरू की गई एक अन्य संस्था 'मुक्ति सदन' थी। इस सदन में उन लोगों को शरण दी गई थी, जो 1900 में अकाल से पीड़ित हुए थे। उन्होंने एक स्कूल भी खोला, जिसमें 400 बच्चे पढ़ सकते थे। शिक्षकों के लिए एक प्रशिक्षण स्कूल और एक औद्योगिक स्कूल भी खोला गया, जिसमें बगीचे, तेल की पेराई का यंत्र, डेयरी, लॉन्ड्री और अवन आदि भी थे। यहाँ सिलाई, बुनाई और कशीदाकारी का प्रशिक्षण भी दिया जाता था।

तीसरी संस्था जो उन्होंने शुरू की, वह थी 1882 में मुंबई में स्थापित 'आर्य महिला समाज'। इस समाज का उद्देश्य था महिलाओं के बीच सामाजिक संपर्क और सहयोग को बढ़ावा देकर उनका उत्थान करना। यहाँ साप्ताहिक भाषणों और अनौपचारिक सम्मेलनों का भी आयोजन किया जाता था। योग्य सदस्याओं को छात्रवृत्ति भी दी जाती थी। छात्राओं के लिए एक छात्रावास भी बनाया गया था। आवासीय छात्राओं, महिला विद्यार्थियों के लिए बैडमिंटन कोर्ट भी बनाया गया था। इसकी सदस्यता सभी के लिए खुली थी, भले ही वे किसी भी जाति और धर्म की हों।

महिला शिक्षा के सरोकारों को अधिक प्रोत्साहन देने के लिए पंडिता रमाबाई 1882 में भारत सरकार द्वारा नियुक्त शिक्षा आयोग के समक्ष उपस्थित हुईं।

संस्कृत की महान विद्वान और समाज सेविका पंडिता रमाबाई ने पूना में एक विधवागृह की स्थापना की। वहाँ महिलाओं को ऐसी चीज़ें सिखाई जाती थीं, जिनके सहारे वे अपनी रोज़ी-रोटी चला सकें। इसके अलावा उन्होनें दो अन्य संस्थाओं मुक्ति सदन और आर्य महिला समाज की भी स्थापना की। मुक्ति सदन में अकाल पीड़ित लोगों, विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों को राहत प्रदान की जाती थी और आर्य महिला समाज ने महिलाओं की शिक्षा और सर्वांगीण विकास पर विशेष रूप से ध्यान दिया।

उनके कुछ सुझाव शिक्षकों के प्रशिक्षण और विद्यालय निरीक्षिकाओं की नियुक्ति के विषय में थे। उन्होंने यह सुझाव भी दिया कि भारतीय महिलाओं को चिकित्सा महाविद्यालयों में दाखिला लेने का अवसर दिया जाना चाहिए। रमाबाई के साक्ष्य ने लोगों का काफ़ी ध्यान आकर्षित किया। चिकित्सा व्यवसाय में महिलाओं की भागीदारी के उनके विचार महारानी विक्टोरिया तक पहुँचे। उनके सुझाव पर अमल करने की दृष्टि से लेडी डफरिन ने महिला चिकित्सा आंदोलन का सूत्रपात किया। पंडिता रमाबाई के कुछ महत्त्वपूर्ण प्रकाशनों में *स्त्री धर्मनीति* और *हाई कास्ट हिंदू विमेन* हैं। उन्होंने द *न्यू टेस्टामेंट* का सरल मराठी में अनुवाद भी किया।

सुलतान जहाँ बेगम (1858–1930)

मध्य भारत में 19वीं और 20वीं शताब्दी के बीच एक छोटी रियासत थी, जिसे भोपाल के नाम से जाना जाता था। अब यह मध्य प्रदेश की राजधानी है। यह एक समृद्ध और खूबसूरत राज्य था। भोपाल राज्य की एक प्रमुख विशेषता यह थी कि इसका शासन लगभग सौ वर्षों तक (1817 से 1926 तक) चार महिला शासकों के हाथ में रहा। उनमें से अंतिम सुलतान जहाँ बेगम थीं।

स्रोत – बेगम्स ऑफ़ भोपाल–डायनेस्टी ऑफ़ विमेन रूलर्स इन राज इंडिया, शहरयार एम. खान, सुल्लतान जहाँ का चित्र, लंदन 1926, वीवा बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, 2004

सुलतान जहाँ बेगम का जन्म 1858 में हुआ था। उन्होंने 1901 में भोपाल की राजगद्दी संभाली और 1926 तक शासन किया। यह वह समय था जब भारत पर अंग्रेज़ों का शासन था। रियासतों में अंग्रेज़ स्थानीय शासकों की सहायता करने के नाम पर उनके प्रशासन में हस्तक्षेप करते रहते थे। भोपाल भी इसका अपवाद नहीं था। भोपाल की सभी बेगमों के शासन काल में अंग्रेज़ों की दखल को महसूस किया जाता था। सुलतान जहाँ बेगम का भी अंग्रेज़ों से ऐसा ही संबंध था।

ऐसी परिस्थितियों में भोपाल की यह महिला शासक अपने प्रशासन को कुशलता से चला रही थी। उन्होंने 20वीं शताब्दी की शुरुआत में रूढ़िवादी समाज में रहते हुए अत्यधिक उत्साह के साथ समाज सुधार के काम किए। उन्होंने अपने राज्य के प्रतिष्ठित परिवारों की महिलाओं को आगे बढ़ने और राज्य की प्रगति में भूमिका निभाने के लिए प्रोत्साहित किया। उनके दरबार के अनेक संभ्रांत दरबारियों और बड़े ज़मींदारों ने उनका विरोध किया। लेकिन वे मज़बूत इरादों की महिला थीं और अपने विचारों और प्रयासों में अडिग रही।

सुलतान जहाँ बेगम स्वयं एक अति शिक्षित और प्रगतिशील महिला थीं। वे जानती थीं कि बालिकाओं के उद्धार के लिए शिक्षा का क्या महत्त्व है। अपने शासन के आरंभिक

वर्षों में उन्होंने प्रशासनिक और सामाजिक सुधारों के लिए अनेक महत्त्वपूर्ण निर्णय लिए। शिक्षा के क्षेत्र में सुधार उनके महत्त्वपूर्ण कार्यों में से थे। अपने शासनकाल में उन्होंने भोपाल राज्य में अनेक स्कूल खोले। उन्होंने ग्रामीण क्षेत्रों की लड़कियों की शिक्षा के लिए गंभीर प्रयास किए और ग्रामीण क्षेत्रों की लड़कियों और लड़कों के लिए अनेक विद्यालय खोले। गरीब लड़कियों को स्कूल की फ़ीस में रियायत दी जाती थी और छात्रवृत्तियाँ भी दी जाती थीं।

इन स्कूलों के विद्यार्थियों को साहित्य, धर्मशास्त्र और गणित आदि विषय पढ़ाए जाते थे। उन्हें कुछ रोज़गारपरक विषयों का भी प्रशिक्षण दिया जाता था। सुलतान जहाँ बेगम ने अपने राज्य में विधवाओं और गरीब महिलाओं की स्थिति को सुधारने पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान दिया। उन्होंने उनके लिए प्रौढ़ शिक्षा के केंद्र खोले, जहाँ उन्हें कशीदाकारी, सिलाई आदि सिखाई जाती थी। ये विद्यालय समाज के सभी वर्गों के लिए खुले थे। सभी धर्मों और जातियों की लड़कियों को यहाँ बिना किसी भेदभाव के प्रवेश दिया जाता था। उन्होंने लड़कों के विद्यालयों में भी लड़कियों को प्रवेश देना शुरू कर दिया और इस प्रकार रूढ़िवादी समाज में सह-शिक्षा की शुरुआत की।

सुलतान जहाँ बेगम बेहद दयालु महिला थीं और गरीब परिवारों की लड़कियों का विवाह कराने पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देती थीं। नवविवाहित जोड़े को नए जीवन की शुरुआत के लिए राजकोष से कुछ धन भी दिया जाता था।

समाज के विभिन्न वर्गों की महिलाएँ नियमित रूप से उनके महल में मिला करती थीं और महिलाओं के उत्थान के लिए काम करती थीं। इस प्रकार भोपाल में उनके नेतृत्व में महिला आंदोलन की शुरुआत हुई।

1926 में उन्होंने अपने पुत्र नवाब हमीदुल्लाह खां के लिए अपनी राजगद्दी छोड़ दी और अपना जीवन मानवता, विशेषरूप से महिलाओं की सेवा के लिए समर्पित कर दिया। 1930 में उनका निधन हो गया।

पेरियार रामास्वामी (1879–1973)

ई.वी. रामास्वामी नायकर, पेरियार नाम से लोकप्रिय थे। उनका जन्म 17 सितंबर 1879 को तमिलनाडु के इरोड में एक मध्यवर्गीय व्यवसायी के परिवार में हुआ था। वे बहुत कम उम्र में ही अपने पिता के व्यवसाय में हाथ बँटाने लगे थे। अपने आरंभिक जीवन में रामास्वामी आस्तिक थे। आस्तिक वह होता है, जो ईश्वर में आस्था रखता है। उन्होंने संस्कृत के अनेक धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन किया था। लेकिन उनकी काशी की यात्रा ने उनकी आस्था में बदलाव ला दिया। वे नास्तिक बन गए (नास्तिक वह होता है, जो ईश्वर में आस्था नहीं रखता)।

वे तीर्थयात्रा पर काशी के प्रसिद्ध शिव मंदिर में पूजा करने गए। उनके मन में काशी की छवि ऐसे स्थान की थी, जहाँ सभी हिंदुओं के साथ एक जैसा व्यवहार किया जाता है। लेकिन उन्हें भंडारे (मुफ़्त भोजन के स्थान) पर भोजन करने से रोका गया क्योंकि वे ब्राह्मण नहीं थे। बाद में उन्हें पता चला कि उस भंडारे या मुफ़्त भोजन स्थल का निर्माण एक द्रविड़ व्यापारी द्वारा दिए गए दान से करवाया गया था।

पेरियार रामास्वामी
स्रोत – *हमारे अतीत–3*, भाग–2,
एन.सी.ई.आर.टी. पृ. 119

गैर–ब्राह्मणों के विरुद्ध होने वाले इस भेदभाव से वे बहुत दुःखी हुए। जो अपमान उन्होंने वहाँ झेला, वह उनके जीवन में परिवर्तनकारी सिद्ध हुआ। वे जाति–प्रथा के प्रबल विरोधी बन गए। उन्होंने केरल में वैक्कोम में उन गली–मोहल्लों, निचली जातियों के लोगों के प्रवेश पर प्रतिबंध के विरुद्ध आंदोलन छेड़ा, जहाँ अमीर लोग रहते थे। यह आंदोलन अत्यधिक सफल हुआ और उन्हें 'वैक्कोम के पुरुषरत्न' की उपाधि दी गई।

पेरियार 1919 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से जुड़ गए। वह कांग्रेस के रचनात्मक कार्यक्रमों का हिस्सा बन गए। इस कार्यक्रम में खादी के उपयोग, ताड़ी की दुकानों के आगे धरना, विदेशी वस्तुएँ बेचने वाली दुकानों के बहिष्कार और छुआछूत को मिटाने आदि पर ज़ोर दिया गया था। बाद में उन्होंने देखा कि कांग्रेस में भी जाति के आधार पर भेदभाव किया जाता है। उन्होंने देखा कि राष्ट्रवादियों द्वारा दी गई दावतों में बैठने की व्यवस्था में जातिगत भेदभाव रखा जा रहा था। निचली जाति के लोगों को उच्च जाति के लोगों से दूर बैठाया जाता था।

उनका मानना था कि अछूत ही मूल तमिल संस्कृति के वाहक हैं और उन्हें अपनी प्रतिष्ठा के लिए लड़ना पड़ता है। अछूतों के सरोकारों की रक्षा के लिए उन्होंने 'आत्मसम्मान अभियान' प्रारंभ किया। उनका मानना था कि क्योंकि सभी धर्मों के नेता यह मानते हैं कि सामाजिक विभेद और असमानताएँ ईश्वर–प्रदत्त हैं, इसलिए अब अछूतों को चाहिए कि वे सामाजिक न्याय और समानता प्राप्त करने के लिए स्वयं को सभी धर्मों से अलग कर लें। वे हिंदू धर्मग्रंथों, विशेष रूप से *मनु स्मृति* (जो विधि का प्राचीन ग्रंथ है) के कटु आलोचक बन गए। उनका कहना था कि ऐसे ग्रंथों का उपयोग उच्च जातियों के द्वारा निचली जातियों पर अधिकार जमाने और महिलाओं पर पुरुषों का प्रभुत्व जताने के लिए किया जाता है। पेरियार अंतर्जातीय विवाहों और विधवाओं के पुनर्विवाह का समर्थन करते थे। उनका सुदृढ़ मत था कि समाज में व्याप्त रूढ़िवादिता, अंधविश्वास, सामाजिक भेदभाव और कई अन्य कुरीतियों को दूर किया जाना चाहिए। अपने जीवन के अंत तक वे इनके विरुद्ध अनवरत संघर्ष करते रहे।

आओ याद करें

1. जर्मन समाजवादी सम्मेलन (जर्मन सोशलिस्ट कॉन्ग्रेस) कब हुआ था?
2. मैडम कामा ने इंग्लैंड में अपने राजनीतिक कार्य की शुरुआत किसके मार्गदर्शन में की थी?
3. पहली बगावत में यू कियांग नंगबाह गिरफ़्तारी से किस प्रकार बचे थे?
4. लड़कियों की शिक्षा के लिए काम करते समय सावित्रीबाई फुले ने किन कठिनाइयों का सामना किया?
5. सुलतान जहाँ बेगम ने भोपाल में जो स्कूल खोले थे, वे आज भी चल रहे हैं। ये स्कूल किनके लिए खोले गए थे? इन स्कूलों के विषय में नयी बात क्या थी?

आओ चर्चा करें

6. मैडम कामा ने राष्ट्र के निर्माण में महिलाओं की भूमिका पर ज़ोर दिया है। आपके अनुसार महिलाओं ने राष्ट्र निर्माण में क्या भूमिका निभाई थी और वे क्या भूमिका निभा सकती हैं?
7. आपको यू कियांग नंगबाह की कौन सी बात सबसे अधिक पसंद आई?
8. सावित्रीबाई फुले को वंचित लड़कियों की शिक्षा के लिए काम करने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। आपको अपनी शिक्षा प्राप्त करने में किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है? इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए क्या किया जाना चाहिए?
9. क्या आपके आवासीय विद्यालय का नाम कस्तूरबा गांधी के नाम पर रखना उचित है? क्या आप किसी अन्य व्यक्ति का नाम बता सकती हैं, जिन्होंने उनके कामों को आगे बढ़ाया है?
10. आपके गाँव में महिलाओं को कुप्रभावित करने वाले कौन से रीतिरिवाज आज भी प्रचलित हैं? क्या आपने कभी इनका प्रतिरोध किया है या इनके विरुद्ध कोई कार्रवाई की है?

आओ करके देखें

11. भारत के उत्तर-पूर्वी क्षेत्र और अन्य भागों के स्वतंत्रता-सेनानियों के विषय में कुछ अन्य कहानियाँ एकत्रित कीजिए।
12. सात समूह बनाइए। अध्याय में वर्णित किए गए सातों लोगों में से एक-एक के विषय में हर समूह कुछ और अधिक जानकारी एकत्रित करके एक परियोजना तैयार करे।
13. अपने गाँव की आदर्श अनुकरणीय महिलाओं के बारे में जानकारी प्राप्त कीजिए और उनसे साक्षात्कार कीजिए।
14. यदि आप अपने गाँव की किसी ऐसी महिला अथवा पुरुष के विषय में जानती हैं, जिन्होंने विधवाओं, गरीब महिलाओं और ऐसी स्त्रियों की सहायता की है, जो अपने परिवार और समुदाय के हाथों हिंसा का शिकार हुई हैं, तो उनसे साक्षात्कार कीजिए और एक रिपोर्ट बनाइए।
15. ऐसी मुसलमान महिलाओं का पता लगाइए, जो अपने राज्य में अथवा आपके पास-पड़ोस और आपके क्षेत्र में लड़कियों की शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए काम कर रही हैं।
16. कुछ और ऐसे व्यक्तियों की जीवनियाँ पढ़िए, जिन्होंने भेदभाव के विरुद्ध संघर्ष किया है। कक्षा में उनके बारे में विस्तार से बताइए।

क्या सब कुछ जाता बीत?

कहते बीता युग बने अतीत,
पर क्या सब कुछ जाता बीत?

कुछ बीता धूमिल हो जाता,
लेकिन कुछ फिर भी रह जाता,
समय का बरतन कभी ना रीता,
बीता युग भी संग-संग जीता।

बीता युग कुछ बदल-बदल कर,
संग हमारे जो ना जीता,
तो पहिया भी आज ना होता,
और न होते खेत, मकान,
ना ही होते खेत, मकान,
ना ही होती आग जो मानव ने,
खोजी थी उस अतीत में।

ज्ञान जो खोजा था मानवों ने
और धरोहर अवशेषों में,
रह जाती है साथ हमारे,
करना सीखें इससे प्रीत।
कहते बीता युग बने अतीत,
पर क्या सब कुछ जाता बीत?

—इन्दू कुमार

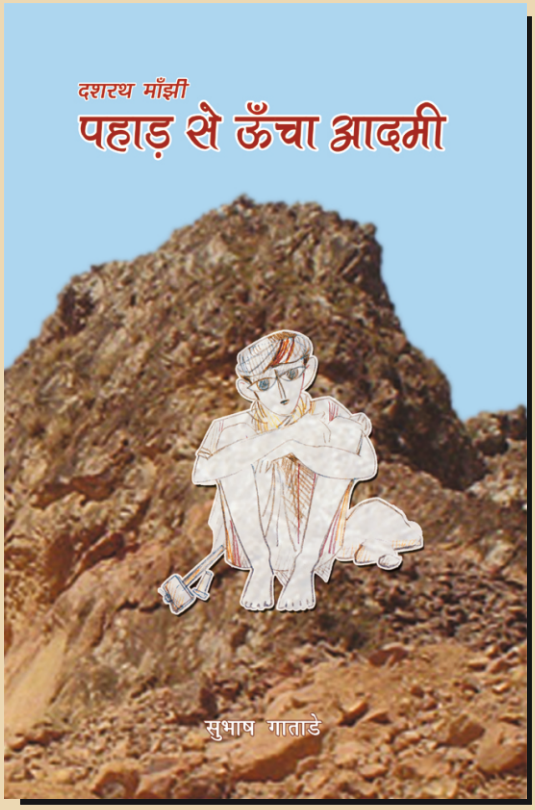

दशरथ माँझी

पहाड़ से ऊँचा आदमी

सुभाष गाताडे

₹ 30.00 / पृष्ठ 38

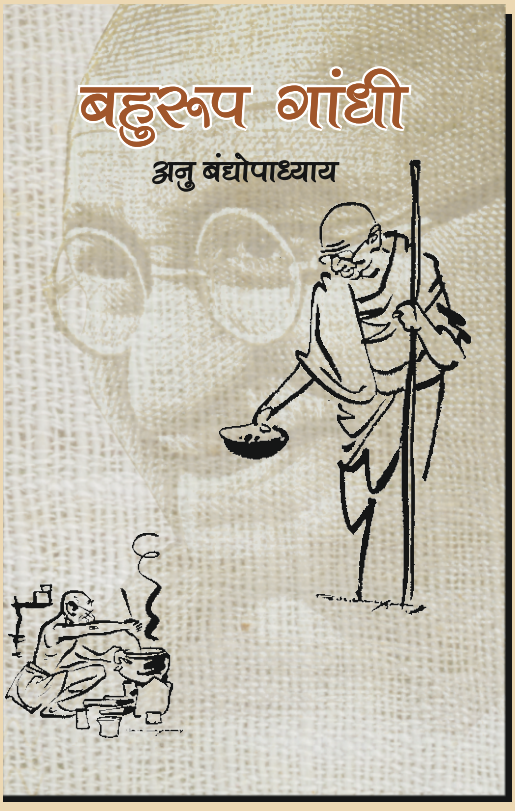

बहुरूप गांधी

अनु बंद्योपाध्याय

₹ 40.00 / पृष्ठ 170

अधिक जानकारी के लिए कृपया www.ncert.nic.in देखिए अथवा कॉपीराइट पृष्ठ पर दिए गए पतों पर व्यापार प्रबंधक से संपर्क करें।

23071

विद्ययाऽमृतमश्नुते

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

ISBN- 978-93-5007-146-5